छत्तीसगढ़ माध्यमिक शिक्षा मण्डल के नवीन पाठ्यक्रम पर आधारित

पर्यावरण अध्ययन

ENVIRONMENTAL STUDIES

कक्षा–12

2018 – 2019

छत्तीसगढ़ पाठ्यपुस्तक निगम, रायपुर

मूल्य रू.–

छत्तीसगढ़ माध्यमिक शिक्षा मंडल द्वारा निर्देशित संयोजक एवं सदस्य (लेखकगण)

संयोजक

डी. पी. सिंह, प्राचार्य

लेखकगण

डी. पी सिंह (प्राचार्य) श्रीमती साक्षी खरे (व्याख्याता)

डॉ. सी. पी. खरे (वरिष्ठ वैज्ञानिक, इंदिरा गांधी कृषि वि.वि.,रायपुर)

समन्वयक

डॉ. विद्‍यावती चन्द्राकर

आवरण पृष्ठ एवं ले–आउट डिजाइन

रेखराज चौरागड़े

प्रकाशक

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् छत्तीसगढ़, रायपुर

मुद्रक

छत्तीसगढ़ पाठ्यपुस्तक निगम, रायपुर

मुद्रणालय

....

मुद्रित पुस्तकों की संख्या – ....

प्रस्तावना

पर्यावरण हम सबके लिए एवं हम सभी पर्यावरण के लिए हैं, ऐसी सोच विश्व स्तर पर विकसित हुई है। आज पारिस्थितिकीय असंतुलन में लगातार हो रही वृद्धि के कारण सम्पूर्ण विश्व समुदाय पर्यावरण के प्रति किये जा रहे अपराधों के सम्बन्ध में जागरूक हो गया है। आज पृथ्वी को प्रदूषण से बचाने तथा प्राकृतिक संसाधनों के उचित और न्यायसंगत वितरण हेतु तरीकों का पता लगाने के लिए एक विश्वव्यापी कार्यनीति अपनाने की आवश्यकता है ताकि प्राकृतिक संसाधन धारणीय बने रहें और साथ ही साथ भावी पीढ़ियों के लिए भी उनकी पर्याप्त मात्रा बची रहे।

पृथ्वी पर सभी जीव– जन्तुओं के अस्तित्व के लिए पर्यावरण के व्यापक महत्व पर विचार करते हुए माननीय उच्चतम न्यायालय ने भारत के सभी शैक्षणिक संस्थाओं के लिए पर्यावरण एक अनिवार्य विषय कर दिया है। इसी संदर्भ में यह पुस्तक छत्तीसगढ़ माध्यमिक शिक्षा मण्डल से सम्बद्ध सभी विद्यालयों की कक्षा 12 वीं के विद्यार्थियों के लिए तैयार की गयी है, यह पुस्तक माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्देशों को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (एन.सी.ई.आर.टी) द्वारा बनाये गये पाठ्यक्रम के अनुसार छत्तीसगढ़ माध्यमिक शिक्षा मण्डल द्वारा तैयार पाठ्यक्रम के आधार पर लिखी गयी है।

समस्त मापदण्डों का ध्यान रखते हुए पुस्तक लेखन में पूर्ण सावधानी रखी गयी है, फिर भी विद्वतजनों, शिक्षकों, विद्यार्थियों को जहॉ कहीं भी कमी का अहसास हो तो अपने सुझावों से मंडल को अवगत करायेंगे, ताकि हम भविष्य में इस पुस्तक को और बोधगम्य एवं सरल व सरस तथा लोकप्रिय बना सकेंगे।

अध्यक्ष
छत्तीसगढ़ माध्यमिक शिक्षा मण्डल
रायपुर

पर्यावरण– अध्ययन
कक्षा– 12 वीं

समय– 3 घंटा

पूर्णांक 100
सैद्धांतिक 75
प्रायोगिक 25

इकाई क्रमांक	विषय सामग्री	आबंटित अंक	कालखण्ड
01	जैव विविधता	25	33
02	पर्यावरण प्रबन्धन	15	18
03	संधारित विकास	15	17
04	कृषि एवं फसल सुरक्षा	20	22
05	क्षेत्रीय क्रियाकलाप (आंतरिक मूल्यांकन)	25	15
	योग	**100**	**90+15**

I	जैव–विविधता	10	15
1.1	**जैव–विविधता की अवधारणा एवं प्रकार–** जैव विविधता की अवधारणा तथा महत्व जैव विविधता के प्रकार – प्रजाति, पारिस्थितिक एवं आनुवंशिक जैव विविधता। प्रकृति में संतुलन। मानव के अस्तित्व हेतु जैव विविधता। संसाधनों की सीमाऍं।		
1.2	**जैव–विविधता की पारिस्थितिक भूमिका –** विभिन्न प्रजातियों के मध्य पारस्परिक निर्भरता। भारतवर्ष विविध विपुलता वाला राष्ट्र। जैव विविधता का आर्थिक महत्व। जैव विविधता में कमी, संकटग्रस्त, संकटापन्न (खतरे में पड़ी) एवं विलुप्त प्रजातियॉं	10	12
1.3	**जैव विविधता का संरक्षण –** इन सिटू एवं एक्स सिटू संरक्षण। जनता एवं जनजीवन संघर्ष को कम करना।	05	06
II	**पर्यावरण प्रबंधन –**		
2.1	**पर्यावरण प्रबंधन की आवश्यकता, पर्यावरण प्रबंधन** के प्रमुख पहलू–इथिकल, आर्थिक तकनीकी एवं सामाजिक पहलू। पर्यावरण प्रबन्धन के कानूनी प्रावधान।	10	12

2.2 पर्यावरण प्रबन्धन के उपगमन (एप्रोचेस) –

आर्थिक नीतियॉ, पर्यावरण सूचक,मानकों (स्टैण्डर्स) की सेटिंग, सूचनाओं का आदान–प्रदान एवं निगरानी।

III संधारित विकास –

3.1 संधारित विकास की अवधारणा।

संधारित उपभोग की अवधारणा।

वर्तमान एवं भविष्य के जीवन स्तर में सुधार हेतु संधारित विकास की आवश्यकता।

संधारित विकास की चुनौतियॉ सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक चुनौतियॉ।

3.2 संधारित विकास के मददगार आधार –

राजनीतिक एवं प्रशासनिक संकल्प। गतिमान एवं अनाग्राही (फ्लेक्सिबल) नीतियॉ, सटीक तकनीकें।

दक्ष मानव शक्ति का विकास।

व्यक्ति एवं समुदाय की भूमिका।

राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय एजेंसियॉ (शासकीय एवं अशासकीय) की भूमिका।

IV कृषि एवं फसल सुरक्षा –

4.1 संधारित कृषि एवं हरित क्रांति :–

संधारित कृषि की आवश्यकता, हरित क्रांति– पर्यावरण पर इसका प्रभाव।

फसलों के लिए मृदा का महत्व।

सिंचाई पद्धतियॉ, उर्वरकों एवं खादों का उपयोग।

4.2 फसल सुरक्षा :–

प्रमुख पादपनाशक, प्रमुख पादप रोग, इनके नियंत्रण की प्रमुख विधियां (एग्रोकेमिकल)।

पर्यावरण पर एग्रोकेमिकल्स का प्रभाव।

संधारित कृषि के तत्व, मिश्रित फार्मिंग, मिश्रित खेती, फसल चक्र, जैविक एवं आर्थिक पहलू, जैव उर्वरकों एवं जैव पीड़कनाशकों का उपयोग, जैविक नियंत्रण।

4.3 समन्वित पीड़क प्रबन्धन –

समन्वित पीड़क प्रबंधन। फसलों के सुधार में जैव तकनीकी की उपयोगिता।

कृषि उत्पादों का प्रबंधन– संग्रहण, संरक्षण, परिवहन एवं प्रोसेसिंग।

शिक्षक विद्यार्थियों की समझदारी के अनुरूप पूरे सत्र में बालकों से एक परियोजना (Project) अनिवार्य रूप से तैयार करवायेंगे। यह परियोजना नीचे दिये गये उदाहरण में से एक अथवा शिक्षक द्वारा अपने पर्यावरण से संबंधित कोई एक परियोजना हो सकती है –

1. किसी पर्यावरण/ परिवेश के विभिन्न जीवों की परस्पर निर्भरता का अध्ययन।
2. हानिकारक फसल कीटों का अध्ययन एवं उसकी रोकथाम के जैविक उपाय।
3. प्रमुख पादप रोगों एवं उनकी रोकथाम का अध्ययन।
4. पर्यावरण पर एग्रोकेमिकल्स के प्रभावों का अध्ययन।
5. अपने परिवेश के उत्तम फसल चक्र की खोज।

अनुक्रमणिका

अध्याय क्र.	विषय	पृष्ठ क्र.
अध्याय–(1)	जैव–विविधता की अवधारणा एवं प्रकार	01–09
अध्याय–(2)	जैव–विविधता की पारिस्थितिक भूमिका	10–16
अध्याय–(3)	जैव–विविधता का संरक्षण	17–22
अध्याय–(4)	पर्यावरण प्रबन्धन	23–65
अध्याय–(5)	पर्यावरण प्रबन्धन के उपगमन (एप्रोचेस)	66–91
अध्याय–(6)	संधारित/सतत् विकास	92–111
अध्याय–(7)	संधारित/सतत् विकास के मददगार आधार	112–131
अध्याय–(8)	संधारित टिकाऊ कृषि एवं हरित क्रांति	132–148
अध्याय–(9)	फसल सुरक्षा	149–160
अध्याय–(10)	समन्वित पीड़क प्रबन्धन	161–170

पर्यावरण अध्ययन के प्रश्न–पत्र में अंक विभाजन

कुल अंक – 100

सैद्धांतिक प्रश्न–पत्र पर अंक – 75
क्षेत्रीय क्रियाकलाप (आंतरिक मूल्यांकन) – 25

सैद्धांतिक प्रश्न–पत्र में प्रश्नों के प्रकार एवं निर्धारित अंक।

अ अति लघु उत्तरीय प्रश्न
ब लघु उत्तरीय प्रश्न
स निबन्धात्मक प्रश्न

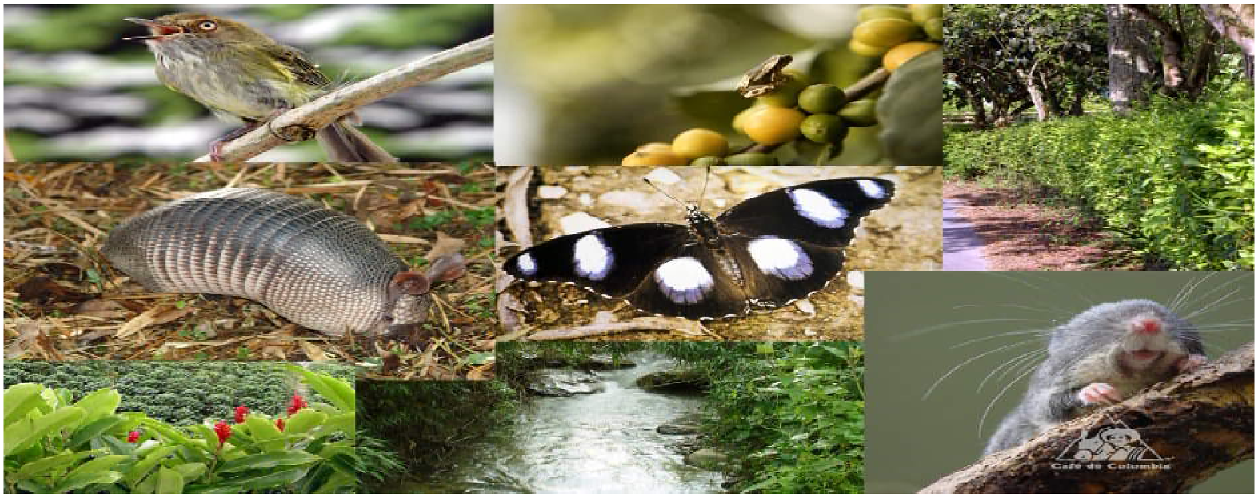

जैव विविधता
[BIODIVERSITY]

इकाई-1

अध्याय — 1

जैव विविधता की अवधारणा एवं प्रकार

पाठ्यक्रम — जैव विविधता की अवधारणा तथा महत्व।
जैव विविधता के प्रकार :— प्रजाति, पारिस्थितिक एवं आनुवंशिक जैव विविधता।
प्रकृति में संतुलन। मानव के अस्तित्व हेतु जैव विविधता। संसाधनों की सीमायें।

परिचय (Introduction) — पृथ्वी को हम जगत जननी के नाम से सम्बोधित करते हैं क्योंकि पृथ्वी पर ही जीवन है। हमारा वैभवशाली जीवन प्रकृति की अनुपम देन है। हरे–भरे पेड़ पौधे, विभिन्न प्रकार के जीव–जन्तु, हवा, पानी, मिट्टी, पहाड़, नदियॉं, झरनें, सागर, महासागर ये सब प्रकृति के ऐसे उपहार हैं जो हमारे विकास के लिए आवश्यक हैं तथा हमारी आर्थिक समृद्धि के प्राकृतिक स्त्रोत हैं। इन जैविक और अजैविक तत्वों से मिलकर पर्यावरण का निर्माण होता है। प्रकृति में पाये जाने वाले पेड़–पौधे एवं जीव–जन्तुओं के आकार–प्रकार तथा संरचना में विविधता पायी जाती है। जीवों की यह असाधारण भिन्नता ही जैव विविधता कहलाती है।

जैव विविधता की अवधारणा तथा महत्व

जैव विविधता एक प्रमुख प्राकृतिक संसाधन है जो हमें जीवन की सुरक्षा प्रदान करता है। जैव–विविधता, हजारों, लाखों एवं करोडों वर्षों से चले आ रहे विकास की देन है। इस पृथ्वी पर लगभग 20 लाख जैव प्रजातियाँ उपलब्ध हैं और इनमें से कोई भी ऐसा जीव नहीं है जो प्राकृतिक रूप से बेकार हो। सभी जीवों की अपनी अलग–अलग भूमिका होती है जो प्रकृति को संतुलित बनाये रखने में अपना योगदान देती है। जैव विविधता का उत्पादकता सम्बन्धी, व्यवहारिक एवं सामाजिक दृष्टि से महत्व निम्नलिखित तथ्यों से ज्ञात होता है :—

Rauvolfia serpentina
सर्पगंधा

1. विभिन्न प्रकार के खाद्यान्न, विभिन्न प्रकार की सब्जियॉं, फल, जलाने की लकड़ी घर तथा फर्नीचर हेतु विविध वृक्ष, मांस, चमड़ा, दूध, घी, मक्खन, अण्डे इत्यादि जैव–विविधता की ही देन है।

2. भारतीय वनों से प्राप्त विभिन्न दुर्लभ जड़ी–बूटियों का विश्व के अनेक देशों में मॉंग है **सर्पगंधा** एक ऐसा पौधा है जिससे 'हार्ट अटैक' की अत्यन्त प्रभावी दवा बनती है।

3. विभिन्न प्रकार के उद्योगों के लिए कच्चा माल वनों से प्राप्त होता है जैसे–लाख, रबड़, बाँस, गोंद, बेंत, मोम, शहद, कत्था, सिनकोना, खालें, हाथी दांत सभी वनों से मिलते हैं। जिससे छोटे उद्योग चलाये जाते हैं। कागज, रेशम,बीड़ी एवं खिलौना उद्योग से अनेक ग्रामीणों को रोजगार प्राप्त होता है, वर्तमान में भारत में लगभग एक करोड़ व्यक्ति प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से वनों पर निर्भर है।

4. वनस्पतियाँ वायुमण्डल की जहरीली गैस कार्बन डाई आक्साइड का अवशोषण कर आक्सीजन प्रदान करती है जिसे हम शरीर के अन्दर श्वसन क्रिया से लेते हैं।

6. प्राणी, वनस्पतियों द्वारा उत्पादित भोजन को ग्रहण कर पर्यावरण में कार्बनडाई –आक्साइड छोड़ते हैं जिसका उपयोग पौधे भोजन बनाने में करते हैं। इस प्रकार वनस्पतियों एवं प्राणियों के बीच सहजीविता का सम्बन्ध है।

सोयाबीन का पौधा (ऊपर) के जड़ों में गाँठों में बैक्टीरिया होती है।

7. पारिस्थितिक तंत्र को जीवित रखने के लिए विभिन्न प्रजातियों के जीव–जन्तु, वनस्पतियों एवं सूक्ष्म जीवों का जीवित रहना आवश्यक है। इनमें से किसी भी प्रजाति का विनाश होने से खाद्य–श्रृंखला प्रभावित होती है।

8. जैविक विविधता एक मूल्यवान आनुवंशिक संसाधन है। कृषि वैज्ञानिक फसलों में वांछित गुणों वाले जीन का प्रवेश कराके नई किस्म तैयार करते हैं ये रोग प्रतिरोधक, अधिक उपज, बेहतर गुणवत्ता एवं अधिक टिकाऊ होती है। सूक्ष्मजीवों जैसे–जीवाणु, विषाणु, कवक तथा अन्य सूक्ष्म प्रजातियों का उतना ही महत्व है जितना बड़ी प्रजातियों एवं वनस्पतियों का। विविध प्रकार के जीवों के कारण ही पृथ्वी पर जीवन है जिसमें सभी प्रकार के जीवों का अपना विशिष्ट योगदान है। जैव–विविधता से जीन, प्रजाति एवं पारिस्थितिकी तंत्र के अंतर्संम्बन्धों की जानकारी होती है क्योंकि जीन, प्रजातियों के घटक हैं और प्रजातियाँ पारिस्थितिक तंत्र की।

जैव विविधता के प्रकार

जैव विविधता अर्थात जीवों में व्याप्त विषमता, जटिलता और अंतर विभिन्न स्तरों पर हो सकती है। ये स्तर एक–दूसरे से सम्बन्धित होते हैं, किन्तु इन्हें पृथक से व्यक्त किया जा सकता है। जैव–विविधता के निम्न प्रकार (स्तर) हो सकते हैं –

1. प्रजाति विविधता (Species Diversity) –प्रजाति जीवों का एक ऐसा समूह है जिनमें एक समान जीन समूह पाया जाता है। एक प्रजाति के जीव एक दूसरे से अत्यधिक समानता रखते हैं किसी एक विशेष प्रक्षेत्र के अन्तर्गत उपस्थित प्रजातियों के मध्य पायी जाने वाली विविधताओं को प्रजातीय विविधता कहते हैं इन प्रजातियों में जैव विकास के द्वारा नई जातियों के उत्पन्न करने की क्षमता पायी जाती है। विश्व में जीवों की अनेक प्रजातियाँ हैं जो अपने–अपने वातावरण के लिए विशिष्ट प्रकार से अनुकुलित होती हैं एवं अलग–अलग वातावरण में इनकी भूमिकाएँ भी अलग–अलग होती हैं। इन सभी प्रजातियों के अध्ययन द्वारा हम उन जीवों के आनुवंशिकी संगठन के रहस्यों को समझ सकते हैं मनुष्य की उत्पत्ति के बाद से विभिन्न प्रजातियों का विलुप्तीकरण तेजी से हो रहा है। कम प्रजातियों का अर्थ है जाति धन्यता में कमी। अर्थात प्रजातीय विविधता तथा जाति धन्यता एक दूसरे के अनुक्रमानुपाती होती हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में सबसे अधिक बिकने वाली 150 दवाओं में अधिकांश का आधार बैक्टीरिया, कवक तथा रीढ़धारी जन्तु है यदि इन प्रजातियों का विनाश रोक भी लिया जावे तो वास्तविक स्वरूप लाने में लगभग एक करोड़ वर्ष लगेंगे।

धान की विभिन्न प्रजातियाँ

2. पारिस्थितिकी विविधता (Ecological Diversity)–जीव मंडल में कोई कभी भी अकेले नहीं रहता बल्कि उसके साथ जीवित तथा निर्जीव वस्तुएँ रहती हैं। किसी स्थान पर उपस्थित सभी जीवित तथा निर्जीव वस्तुओं की एक साथ उपस्थिति पारिस्थितिक तंत्र कहलाता है। पारिस्थितिकी विविधता के अन्तर्गत पृथ्वी पर पाये जाने वाले विभिन्न पारिस्थितिकी तंत्रों का अध्ययन किया जाता है। प्रत्येक पारिस्थतिकी तंत्र में विशिष्ट प्रकार के जीवों का संगठन पाया जाता है यह जीवों का संगठन ही उस पारिस्थितिकी तंत्र की संरचना का निर्धारण करता है। पारिस्थितिक तंत्र जल की एक बूंद से लेकर समुद्र तक और घास के छोटे मैदान से लेकर बहुत बड़े वन तक हो सकता है।

भारत में पर्याप्त प्राकृतिक संसाधन और धनी जैव–विविधता पायी जाती है सर्वाधिक जैव–विविधता वाले 12 देशों में भारत की भी गिनती होती है। विश्व का सबसे प्राचीन और सबसे बड़ा कृषि प्रधान देश होने के कारण भारत में कृषि योग्य फसलों की विविध प्रजातियाँ और किस्में उपलब्ध हैं।

3. आनुवंशिक विविधता (Genetic Diversity)–एक ही प्रजाति के जीवों में होने वाली विविधताओं को आनुवंशिक विविधता कहते हैं प्रत्येक जीव में जीन (अनुवंशिक इकाई) का एक समूह पाया जाता है और विभिन्न प्रकार के जीवों में विविध प्रकार के जीन समूह पाये जाते हैं। एक जीव के आनुवंशिक गुण में होने वाला परिवर्तन समस्त जीन समूह में परिवर्तन कर देता है और इसी परिवर्तन के फलस्वरूप नयी प्रजातियाँ

उत्पन्न होती हैं।

मनुष्य प्रकृति में उपस्थित जीवों एवं पौधों को अपने अनुसार आनुवंशिक आधार पर बदल देता है। सभ्यता के आरंभ से ही मानव ने अपने भोजन एवं रहन–सहन को ऊँचा उठाने की दृष्टि से जीव–जन्तुओं एवं पेड़–पौधों में प्रजनन कर नई–नई नस्लों एवं किस्मों को विकसित किया। उत्पादकता बढ़ाने के लिए अनेक जन्तुओं तथा वनस्पतियों की संकर जातियाँ पैदा की गयीं। जैसे गाय, मुर्गियाँ, सुअर, मछलियाँ, इत्यादि की उन्नतशील प्रजातियाँ उत्पन्न की जा रही हैं। इसी प्रकार कृषि के क्षेत्रों में उन्नतशील बीजों की खोज की जा रही है।

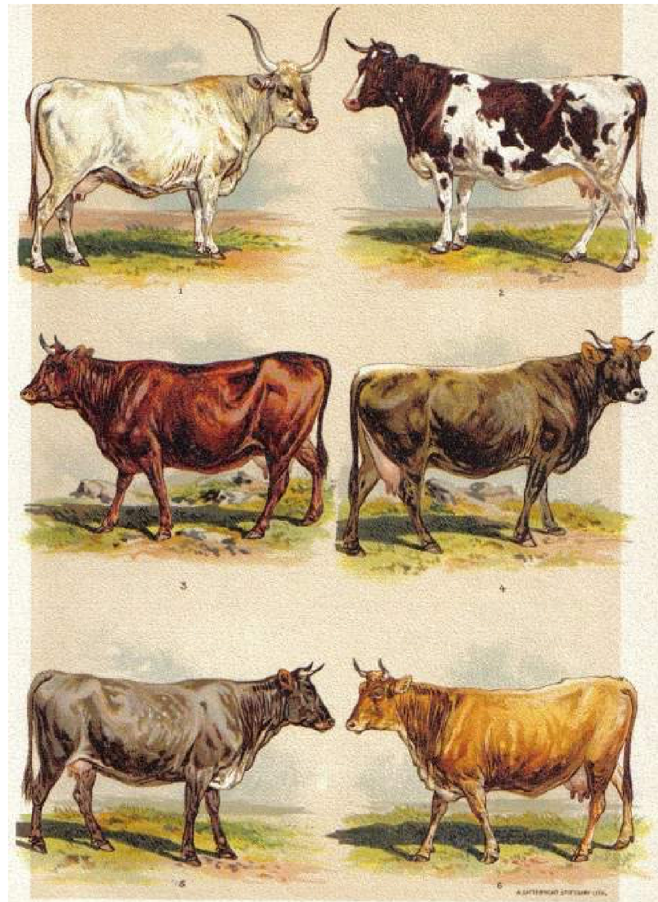
गाय की विभिन्न प्रजातियाँ

प्रकृति में संतुलन

जीव–जन्तुओं का समाप्त होना वर्तमान समय में सबसे गंभीर समस्या है क्योंकि इनकी पूर्ति करना असम्भव है। प्रत्येक देश के पास तीन प्रकार की सम्पदा होती है–1. भौतिक, 2. सांस्कृतिक तथा 3. जैविक। जन्तु तथा पौधे किसी भी देश के धरोहर होते हैं वे लाखों वर्ष के विकास के परिणामस्वरूप बनते हैं मनुष्यों की जनसंख्या विस्फोटक गति से बढ़ रही है। आधुनिक खेती एवं औद्योगिक विकास से पर्यावरण भौतिक एवं रासायनिक रूप से प्रदूषित होने लगा है जिसके कारण जन्तुओं एवं वनस्पतियों की प्रजातियाँ लगातार नष्ट होती जा रही हैं। नयी प्रजातियाँ भी इसी दर से उत्पन्न हुई जिससे औसत संतुलन बना रहा। वर्तमान में समाप्ति की दर नहीं बढ़ी है बल्कि नई प्रजातियों की जन्म दर घटी है क्योंकि उनका प्राकृतिक पर्यावरण नष्ट हुआ है। अतः प्रकृति में संतुलन बनाये रखने के लिए जैव विविधता का संरक्षण आवश्यक है साथ ही इसका महत्व निम्न कारणों से भी है –

1. पर्यावरण संतुलन हेतु।
2. औषधीय महत्व की दृष्टि से।
3. मानव अस्तित्व को बनाये रखने के लिए।
4. दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए।
5. पृथ्वी के बढ़ते तापमान को कम करने के लिए।

मिट्‌टी, जल और वायु के समान ही जैव विविधता एक मुख्य प्राकृतिक संसाधन है जिसका क्षरण पर्यावरण के लिए बहुत ही खतरनाक साबित हो सकता है। अगर इसे नहीं रोका गया तो भविष्य में इसके खतरनाक परिणाम हो सकते हैं। विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जो पहले विकृति तथा बाद में विनाश को जन्म देती है अर्थात समाज में जो भी भौतिक विकास हो रहा है वह प्रायः पर्यावरण एवं प्राकृतिक संसाधनों की कीमत पर हो रहा है जिसे हम पर्यावरण प्रदूषण एवं प्राकृतिक संसाधनों के क्षरण के रूप में भुगत रहे हैं। अतः अब समय आ गया है कि प्रकृति में संतुलन बनाये रखने के लिए हम संतुलित विकास की ओर अपना कदम बढ़ाये ताकि आने वाली पीढ़ियों को प्राकृतिक आपदाओं एवं पर्यावरण प्रदूषण से बचाया जा सके।

मानव के अस्तित्व हेतु जैव–विविधता

जन्तु तथा वनस्पतियाँ पर्यावरणीय संतुलन बनाये रखते हैं। ओजोन परत में छिद्र, हरित गृह प्रभाव के कारण वातावरण में गर्मी का बढ़ना, अम्ल वर्षा, भू–जल स्तर में कमी, भू–क्षरण की समस्या, वर्षा का कम होना, सूखा, बाढ़, चट्टानों का खिसकना तथा प्रदूषण की समस्या जैव–विविधता के विनाश का ही परिणाम है जिससे सारा मानव समाज प्रभावित तथा पीड़ित है, जब किसी स्थान विशेष में वन काटे जाते हैं तो इसका प्रभाव दूर–दराज के इलाकों पर भी पड़ता है क्योंकि भू–रसायन चक्रों द्वारा सभी क्षेत्र आपस में जुड़े रहते हैं। वनों की व्यापारिक कटाई के कारण उस पर आश्रित वनवासियों के आजीविका के साधन छिनते जा रहे हैं। वनों के बड़े पैमाने पर कटाई से वन्य प्राणी कम होते जा रहे हैं। जो बचे हैं उनके लिए भोजन की समस्या बनी हुई है। जिसके कारण वे भोजन की तलाश में गाँवों तक पहुँच जाते हैं। प्रदूषित पर्यावरण से फसलों का उत्पादन प्रभावित हो रहा है। वन विनाश पर स्काटलैण्ड के विज्ञान लेखक राबर्ट चेम्बर्स ने लिखा है –'' वन नष्ट होते हैं तो जल नष्ट होता है, पशु नष्ट होते हैं, तो उर्वरता विदा ले लेती है और तब ये पुराने प्रेत एक के पीछे एक प्रकट होने लगते हैं–बाढ़, सूखा, आग, अकाल और महामारी।''

मेमथ (विलुप्त)

पर्यावरण और जैव–विविधता समेत समस्त प्राकृतिक संसाधनों पर भारत में दशकों से भारी दबाव पड़ रहा है। भारत में मनुष्यों और पालतू पशुओं की ज्यादा आबादी, घोर गरीबी, निरक्षरता तथा संस्थागत ढाँचों के अभाव के कारण प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण का तेजी से ह्रास हुआ है। वनों के कटने से जैव–विविधता को भारी नुकसान हुआ है। अनगिनत जन्तु एवं पादप प्रजातियाँ विलुप्त के कगार पर पहुँच गयी हैं।

मानव के स्वार्थपरक प्रकृति से कोई भी अनभिज्ञ नहीं है। जैव–विविधता संरक्षण में भी मानव का अपना निहित स्वार्थ छिपा है। क्योंकि बिना अपनी स्वार्थ पूर्ति के मानव जाति अन्य जीव जन्तुओं एवं वनस्पतियों के संरक्षण पर जोर नहीं दे सकता है। मानव जानता है कि उसकी समस्त आवश्यकताएँ प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से जैव–विविधता से जुड़ी है जो अनवरत रूप से अपनी अमूल्य सेवाएँ हमें प्रदान करते रहे हैं किसी भी राष्ट्र के आर्थिक, सामाजिक, पारिस्थितिक तथा अन्य सभी पक्षों पर अपना व्यापक प्रभाव डालती है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि जैव विविधता की विविध क्षेत्रों में समतुल्य उपादेयता है जो इस बात की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करती है कि इनको नष्ट होने से बचाया जाना चाहिए और इन्हें संरक्षित करते हुए इनका अधिकतम उपयोग मानव कल्याण हेतु किया जाना चाहिए।

कुछ प्राणियों को जैसे शिवरात्रि को नन्दी पूजन से, दशहरा को अश्वपूजन से, नागपंचमी को नागपूजन से संबंधित करने का उद्देश्य यही था कि जैव–विविधता के संरक्षण में ही मनुष्य जाति का कल्याण है।

संसाधनों की सीमाएँ

संसाधन एक वृहद शब्द है जिसमें प्राकृतिक, आर्थिक, मानवीय या सांस्कृतिक तत्व सभी को सम्मिलित किया जाता है। इस प्रकार संसाधन मानव आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं तथा इसके अन्तर्गत जैव और अजैव दोनों प्रकार के पदार्थ सम्मिलित होते हैं। कोई भी संसाधन तब तक निष्क्रिय रहते हैं जब तक कि वे मानव के उपयोग में नहीं आते। अपनी उपयोगिता के कारण ही कोई भी तत्व संसाधन बन जाता है।

अपनी उपयोगिता के कारण संसाधनों को दो वर्गों में बाँटा गया है –

1. **नवीनीकरणीय संसाधन**
2. **अनवीनीकरणीय संसाधन**

1. नवीनीकरणीय संसाधन

(Renewable Resources) –वे ससांधन जो लगातार प्रयुक्त होते रहते हैं और प्रकृति में अपने आप ही बनते रहते हैं, नवीनीकरणीय संसाधन कहलाते हैं ।

उदाहरण : वन नवीनीकरणीय संसाधन है क्योंकि जब वनों को काटकर लकड़ी प्राप्त की जाती है तो कुछ समय बाद वनों में पेड़ पुनः उग आते हैं और पुनः लकड़ी तैयार होने लगती है।

2. अनवीनीकरणीय संसाधन

(Non Renewable Resources)– वे संसाधन जो प्रकृति में लाखों वर्षों की अवधि में बनकर तैयार होते हैं और समाप्त होने पर दोबारा शीघ्रता से नहीं बनाये जा सकते हैं, अनवीनीकरणीय संसाधन कहलाते हैं।

उदाहरण : कोयला एक अनवीनीकरणीय संसाधन है जो पृथ्वी के अन्दर दबे हुए पेड़ों के अवशेषों से लाखों वर्षों में बनकर तैयार होता है। यदि इसके अंधाधुंध उपयोग से कोयला एक बार समाप्त हो जाय तो इसे शीघ्र दोबारा प्राप्त नहीं किया जा सकता।

दोनों ही प्रकार के संसाधन निश्चित एवं सीमित हैं। यहाँ तक कि नव्य संसाधन जैसे–वायु, जल, मिट्टी की गुणवत्ता नष्ट हो जाती है तो यह अनुपयोगी हो जाता है। प्रदूषित जल, वायु स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होती है।

मानव बुद्धिमान होने के कारण इन संसाधनों का मालिक बन बैठा है। उसने प्राकृतिक संसाधन का अंधाधुंध उपयोग किया है। संसाधन समाज की प्रगति के आधार होते हैं किन्तु उनके अंधाधुंध उपयोग से भौतिक सुविधाओं की वृद्धि के साथ–साथ जीवों तथा संसाधनों का संतुलन बिगड़ने लगा है। मानव की भलाई इसी में है कि वह संसाधनों का उपयोग विवेकपूर्ण ढंग से करे। पर्यावरण तथा संसाधन उपयोग सम्बन्धी विभिन्न पक्षों का अध्ययन किया जावे तथा इन संसाधनों का उचित प्रबन्ध किया जावे।

मानव ने वनों का विनाश इतना अधिक किया है। कि ये संसाधन अनवीनीकरणीय संसाधन बनते जा रहे हैं मृदा एक ऐसा संसाधन है जिसे उचित प्रबन्ध द्वारा उर्वर बनाया जा सकता है। एक फसली एंव आधुनिक खेती के कारण उसकी उर्वरता नष्ट हो जाती है जिसे ठीक करने में हजारों वर्ष लग जाते हैं।

इसी प्रकार वनों के विनाश से विनाशकारी बाढ़ सूखा, भू–क्षरण, भूकम्प, इत्यादि होता है। खनिज तेल तथा प्राकृतिक गैसों के जलने से वायुमण्डल में कार्बन डाईआक्साइड की मात्रा बढ़ती है जिससे पृथ्वी का ऊर्जा संतुलन बिगड़ता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि संसाधनों की एक सीमा है यदि इसका अविवेकपूर्ण उपयोग करते हैं तो पर्यावरण पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ता है। संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करने से संसाधनों एवं पर्यावरण को बचाया जा सकता है।

बाढ़ का दृश्य

निष्कर्ष – संक्षेप में यह कह सकते हैं कि प्राकृतिक संसाधनों को इस तरह से संरक्षित किया जावे कि मानव को उनका अभाव महसूस नहीं हो साथ ही साथ वे निरापद बना रहे। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के शब्दों में '' प्रकृति में सभी की आवश्यकताओं की पूर्ति करने की क्षमता है।'' हम प्रकृति से उतना ही ग्रहण करें जितना हमारे लिए आवश्यक हो अर्थात हम प्रकृति का दोहन तो अवश्य ही करे किन्तु शोषण किसी भी कीमत पर नहीं करें क्योंकि प्राकृतिक संसाधनों पर सिर्फ हमारा ही हक नहीं है बल्कि ये आने वाली पीढ़ियों की धरोहर भी हैं। फलस्वरूप प्राकृतिक संसाधनों की सीमितता को ध्यान में रखते हुए ही उनका बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग करने में ही हमारा सुनहरा भविष्य एवं भलाई है।

प्रश्न और अभ्यास

अति लघुउत्तरीय प्रश्न

1. जैव–विविधता को परिभाषित कीजिए।
2. पृथ्वी पर लगभग कितनी जैव प्रजातियाँ उपलब्ध हैं ?
3. जैव विविधता एक मूल्यवान आनुवांशिक धरोहर है, क्यों ?
4. प्रजातीय विविधता किसे कहते हैं ?

5. आनुवंशिक विविधता क्या है ?
6. प्राणियों को विभिन्न त्योहारों से संबंधित करने का क्या उद्देश्य है ?
7. अपनी उपयोगिता के कारण संसाधनों को कितने वर्गों में बाँटा गया है ?
8. अनवीनीकरणीय संसाधन किसे कहते हैं ?

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. जैव–विविधता की अवधारणा तथा महत्व को समझाइए।
2. जैव–विविधता कितने प्रकार की होती है ? प्रजाति विविधता को समझाइए।
3. प्रकृति में संतुलन बनाये रखने के लिए जैव–विविधता का संरक्षण आवश्यक है क्यों ?
4. मानव के अस्तित्व हेतु जैव विविधता आवश्यक है क्यों ?
5. अनवीनीकरणीय संसाधन किसे कहते हैं ? नवीनीकरणीय संसाधन किन पारिस्थितियों में अनवीनीकरणीय संसाधन हो जाता है, समझाइए।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्रकृति प्रदत्त जैव–विविधता मानव के लिए वरदान है क्यों ?
2. जैव विविधता को परिभाषित कीजिए। इसकी अवधारणा तथा महत्व का संक्षेप में विवेचना कीजिए।
3. जैव–विविधता क्या है ? यह कितने प्रकार की होती है ? प्रत्येक का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
4. संसाधन क्या है ? अपनी उपयोगिताओं के कारण संसाधन को कितने वर्गों में बाँटा गया है ? प्रत्येक का वर्णन कीजिए।

अध्याय – 2

जैव-विविधता की पारिस्थितिक भूमिका

पाठ्यक्रम – विभिन्न प्रजातियों के मध्य पारस्परिक निर्भरता।
भारतवर्ष विविध विपुलता वाला राष्ट्र ।
जैव–विविधता का आर्थिक विभव (महत्व)।
जैव–विविधता में कमी, संकटग्रस्त, संकटापन्न (खतरे में पड़ी) एवं विलुप्त प्रजातियाँ।

विभिन्न प्रजातियों के मध्य पारस्परिक निर्भरता –

प्रकृति असंख्य धागों से निर्मित एक प्रकार का विशाल जाल है जो संतुलित और सौंदर्य पूर्ण है। पृथ्वी के समस्त प्राणी एक–दूसरे पर आश्रित हैं और मानव इस सुकोमल पारस्परिक संबन्धों के इस समन्वित जटिल जाल में मात्र एक कड़ी है, एक धागा है, जब एक प्रजाति लुप्त होती है, एक धागा टूटता है और व्यवस्था विकृत होती है और मानव स्वयं अपने विनाश की ओर ढकेल दिया जाता है।

प्रकृति में यदि एक जन्तु विलुप्त होता है, तो सम्पूर्ण पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ जाता है। उदाहरण स्वरूप यदि पृथ्वी से सांप नष्ट हो जाए तो चूहों की संख्या बढ़ जाएगी जो फसलों को नष्ट कर देंगे। इसी प्रकार यदि शेर विलुप्त हो जायें तो हिरन जैसे जन्तु जो शेर का भोजन है, इनकी संख्या बढ़ जाएगी। इससे यह प्रदर्शित होता है कि सभी जीव, खाद्य श्रृंखला आपस में मिलकर खाद्य जाल बनाती हैं, क्योंकि खादय् श्रृंखलाएँ किसी न किसी रूप में एक दूसरे से जुड़ी होती हैं। यदि इनमें से एक एक भी खाद्य श्रृंखला नष्ट होगी तो सम्पूर्ण जैव विविधता प्रभावित होगी। यह जैव विविधता, पारिस्थितिक तंत्र को सुचारू रूप से चलाने के लिए आवश्यक हैं पारिस्थितिक तंत्र में जीव जन्तु व पेड़–पौधे दोनों ही समान रूप में महत्वपूर्ण हैं उदाहरण के लिए यदि पेनिसिलियम पृथ्वी पर से एन्टी बायोटिक की खोज से पहले और सिनकोना, कूनेन के खोज से पहले विलुप्त हो जाता तो क्या होता ? हम कई भयावह बीमारियों से निजात नहीं पाते। इसलिए जैविक विविधता का संरक्षण आवश्यक है।

जैव विविधता का महत्व सिर्फ इसलिए ही नहीं है कि वह पारिस्थितिकी संतुलन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है वरन् जैव विविधता द्वारा ही पृथ्वी पर रहने वाला हर प्राणी अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति कर पाता है।

भारत में करीब 90 प्रतिशत औषधियॉ पौधों से प्राप्त की जाती हैं। वनवासी अपने जीवन निर्वाह के लिए औषधीय पौधे एवं वनोपज पर ही निर्भर रहते हैं। प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र प्राकृतिक संसाधनों के विकास और प्रबन्ध को काफी प्रभावित करता है।

निष्कर्ष –

उपर्युक्त विवरण इस बात को उल्लेखित करता है कि प्रकृति में ऐसे अनेक जीव–जन्तुओं का अस्तित्व है जो एक दूसरे पर पूर्णरूपेण अवलम्बित है। इनके पारस्परिक साहचर्य में यदि किसी प्रकार का व्यवधान होता है तो इनका जीवन निश्चितरूप से बाधित होगा।

भारतवर्ष विविध विपुलता वाला राष्ट्र –

प्रकृति ने भारत को पर्याप्त प्राकृतिक संसाधन एवं समृद्ध जैव–विविधता प्रदान की है। यहॉ विभिन्न प्रकार के वास स्थान पाये जाते हैं जहां एक ओर उष्ण–कटिबन्धीय बन से लेकर अल्पाइन बनस्पतियां पायी जाती है वहीं दुसरी ओर शीतोष्ण वन से लेकर कोस्टल वनस्पतियॉ पायी जाती हैं। यहॉ की विविध विशिष्ट एवं विषम भौगोलिक एवं जलवायुवीय दशाएँ यहॉ की जीव–जातियों को एक ही राष्ट्र विशेष की सीमाओं में होने पर भी विभिन्नताएँ प्रदान करती हैं।

1. भारत की भौगोलिक एवं जलवायवीय दशाएँ (Physiographic and Climatic Conditions of India)–भारत एक विशाल देश है क्षेत्रफल की दृष्टि से विश्व में इसका सातवॉ स्थान है। इसका विस्तार पूर्व से पश्चिम की ओर 2933 किमी तथा उत्तर से दक्षिण की ओर 3214 किमी है। भारत के उत्तर में विशाल हिमालय पर्वत श्रेणियॉ तथा दक्षिण में तीन ओर विस्तृत समुद्र भारत की प्राकृतिक सीमा बनाते हैं। भारत में नम उष्णकटिबन्धीय पश्चिमी घाट से राजस्थान के गर्म रेगिस्तान लद्दाख के ठण्डे रेगिस्तान तथा हिमालय की बर्फ से ढॅकी चोटियॉ जैसी चरम स्थितियों की जलवायु मिलती है। भारत की धरातल पर पर्वत, पठार, मैदान आदि सभी प्रमुख स्थल पाये जाते हैं। हमारे देश के विभिन्न भागों में विभिन्न प्रकार की मिट्टियॉ पायी जाती हैं जिसमें लाल मिट्टी, काली मिट्टी, दोमट मिट्टी, बलुई मिट्टी आदि प्रमुख हैं।

2. भारत में वनस्पतियों की विविधता (Diversity of Vegetation in India) – हमें ज्ञात है कि हमारे देश में विभिन्न प्रकार की जलवायु पाई जाती है। इस जलवायु विभिन्नता के कारण विभिन्न पारिस्थितिकीय तंत्र विकसित हुए जिसके फलस्वरूप विभिन्न जातियॉ विकसित हुईं इस कारण हमारा देश पादप सम्पदा से भरपूर है। हमारे देश में पादपों की लगभग 45,000 जातियॉ पाई जाती हैं जो सम्पूर्ण विश्व में पाई जाने वाली जातियों का 15 प्रतिशत है।

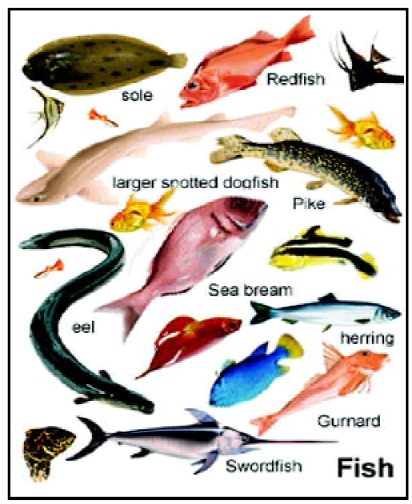

भारत की पादप जैव विविधता की एक विशेषता और है, कि यहाँ से बहुत सी पादप जातियों की उत्पत्ति हुई है जो पूरे विश्व में फैल गयी।

3. भारत में जन्तुओं की विविधता (Diversity of animals in India) – भारत में जन्तुओं की लगभग 81000 जातियॉ पायी जाती हैं इनमें से 80 प्रतिशत प्रजातियाँ केवल कीटों की हैं। इसी प्रकार विश्व में पाई जाने वाली कुल मछलियों की प्रजातियों में से एक तिहाई भारत की जल राशियों में विद्यमान हैं। विश्व की 9000 पक्षियों की जातियों में से लगभग 1200 जातियॉ भारत में पाई जाती हैं। उभयचरों, पक्षियों और स्तनधारियों की संख्या के आधार पर भारत विश्व में अपना ग्यारहवॉ स्थान रखता है।

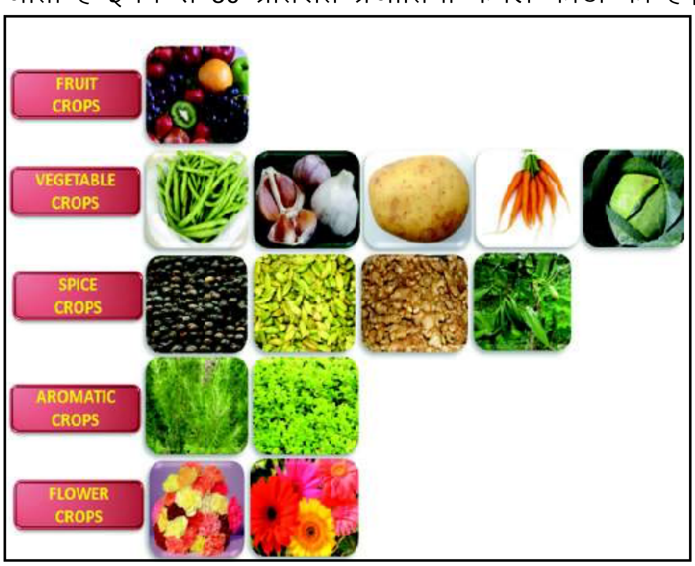

4. भारत में कृषि उपजों की विविधता – भारत एक कृषि उपजों की विविधता वाला राष्ट्र है। अकेले हमारे देश ने विश्व की

लगभग 167 फसलों की प्रजातियॉ प्रदान की है। भारत द्वारा विश्व को प्रदान की गयी मुख्य फसलें हैं –धान, गन्ना, ज्वार, बाजरा, सरसों, जूट, केला, नीबू, आम, कटहल, इलायची, हल्दी, अदरक, धनियां, सौंफ तथा शाकीय औषधियॉ इत्यादि।

इसके अतिरिक्त यहॉ पर चाय, काफी, तम्बाकू, गन्ने की विभिन्न प्रजातियॉ पाई जाती हैं।

5. भारत का पशुधन – भारत में उपयोगी पशुओं की जातियों में भी विभिन्नताएॅ देखने को मिलती हैं। यहॉ पर गाय भैंस की 27 जातियॉ, बकरी की 22 जातियॉ, कुक्कुट की 18 जातियॉ, ऊॅट की 8 जातियॉ, तथा घोड़े के 6 जातियॉ पाई जाती हैं।

उपरोक्त विवरण से यह ज्ञात होता है कि भारत एक विविधताओं से परिपूर्ण देश है जितनी विविधताएॅ यहॉ की भौगोलिक तथा जलवायु की दशाओं में पाई जाती हैं उसके अनुरूप यहॉ की जीव–जातियों में विविधताएॅ दृष्टिगोचर होती हैं। अतः भारत एक वृहद विविधताओं वाला देश हैं।

जैव विविधिता का आर्थिक विभव (महत्व)

जैव विविधता के महत्व को देखते हुए आज पूरे विश्व में अपने यथोचित साधन से इसके संरक्षण का प्रयास कर रहे हैं। जैव विविधता के क्षरण या इसकी हानि से हमारा पर्यावरण कितना प्रभावित होगा इसका आकलन आर्थिक दृष्टि से भी किया जाता है। वर्तमान समय में पर्यावरण एवं पारिस्थितिकीय विज्ञान में एक नई शाखा का उदय हुआ है जिसमें आर्थिक दृष्टि से जैव विविधता का मूल्यांकन भी किया जाता है। इस नई शाखा को 'पर्यावरण अर्थशास्त्र' कहा जाता है। पर्यावरणीय अर्थशास्त्र का मुख्य उद्देश्य पर्यावरण के मूल्यांकन की विधि ज्ञात करना है जिसकी सहायता से जीन विविधता, जाति विविधता, समुदाय विविधता और पारिस्थितिकीय विविधता इत्यादि का आर्थिक मूल्य ज्ञात किया गया है। इन आर्थिक मूल्यों के अन्तर्गत सम्पदा का बाजारू एवं भावी मूल्यों का ऑकलन किया जा सकता है जैसे किसी जानवर का उपयोग मांस के लिए किया जाता है एवं उसका ऑकलन पर्यटन की दृष्टि से भी किया जा सकता है।

आर्थिक मूल्य को निम्नानुसार विभिन्न मूल्यों में विभाजित किया जा सकता है–

1. प्रत्यक्ष मूल्य **(Direct Value)**
2. अप्रत्यक्ष मूल्य **(Indirect Value)**

1. प्रत्यक्ष मूल्य (Direct Value) – वह सम्पदा जिसे उत्पन्न किया जा सकता है एवं इस मूल्य का उपयोग किया जाता है, इसे उपभोग मूल्य भी कहते हैं। इन मूल्यों की गणना हेतु समूहों का निरीक्षण किया जाता है। आयात–निर्यात सांख्यिकी का निरीक्षण करके एवं इसके अन्य लाभों के आधार पर प्रत्यक्ष मूल्य को दो भागों में विभक्त किया गया है –

(a) वह सम्पदा जिसे स्थानीय स्तर पर उपभोग किया जाता है तथा जिनका राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में उल्लेख नहीं होता क्षयशील उपभोग मूल्य कहा जाता है। उदाहरण के लिए जंगल की जलाऊ

लकड़ियों का उपयोग स्थानीय निवासी ईंधन के लिए करते हैं चूँकि इनका उपयोग स्थानीय स्तर पर हो रहा है इस कारण क्षयशील उपभोग मूल्य कहा जाता है।

(b) वह सम्पदा जिनकी पैदावार तो जंगल में होती है लेकिन जिसका उपभोग राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में भी होता है उत्पादी उपभोग मूल्य कहलाता है। अर्थात इनसे आर्थिक लाभ होता है। उदाहरण के लिए जंगल की इमारती लकड़ी (सागौन, शीशम, बीजा इत्यादि) को प्राप्त करके इसका व्यापारिक उपयोग किया जाता है एवं इससे जो आर्थिक लाभ होगा उत्पादी उपभोग मूल्य होगा।

2. अप्रत्यक्ष मूल्य (Indirect Value) – अप्रत्यक्ष मूल्य का अर्थ है–सम्पदाओं के व्यक्तिगत उपभोग के बिना आर्थिक लाभ होना। यह वह लाभ है जो जैव विविधता द्वारा प्रदान किये जाते हैं जिसमें सम्पदा न तो उत्पन्न होती है और न ही उसका नाश होता है।

इस प्रकार के अप्रत्यक्ष मूल्य के लाभ के अन्तर्गत मनोरंजन, शिक्षा, वैज्ञानिक अनुसंधान, जल की गुणवत्ता, मानवीय समाज के लिए भावी विकल्प उत्पन्न करना इत्यादि आते हैं।

जैव विविधता का वर्तमान समय में अनेक महत्व है यह प्राकृतिक जीव बैंक हैं। इन्हीं के द्वारा अनेक प्रजातियॉ प्राकृतिक रूप से उत्पन्न होती रहती हैं। मिट्‌टी, जलवायु और प्राकृतिक वनस्पति इन जीवों के लिए आधार बनती हैं। प्राकृतिक जीन द्वारा प्राप्त आनुवांशिक विविधता ही खेती, उद्योग व दवाइयों के विकास में भरपूर योगदान प्रदान करती हैं। ग्रामीण परिवेश में तो ये जंगली प्रजातियॉ मूलभूत आवश्यकताओं (रोटी, कपड़ा, चारा, ईंधन इत्यादि) का आधार हैं। इसके अतिरिक्त आनुवांशिकी विविधता तथा जैव विविधता जल व मिट्‌टी का संरक्षण, नर्सरी व विकसित प्रजातियों का सृजन करने के लिए जर्म प्लाज्म दाता की तरह ही नहीं अपितु उनके परागण, निषेचन तथा अगली पीढ़ी पैदा करने का वातावरण तैयार करने के लिए जिम्मेदार हैं। इस प्रकार जैव विविधता के अनेक आर्थिक लाभ हैं।

जैव–विविधता में कमी, संकटग्रस्त, संकटापन्न (खतरे में पड़ी) विलुप्त प्रजातियॉं–

नगरीकरण और औद्योगीकरण के कारण पेड़–पौधे, जीव–जंतु एक ऐसी स्थिति में पहुॅच चुके हैं जहॉ वे संकटग्रस्त, संकटापन्न या कुछ समय बाद विलुप्तीकरण की स्थिति में होंगे । विश्व में बहुत–सी प्रजातियॉ संकटापन्न या खतरनाक स्थिति में पहुॅच चुकी हैं। जैव–विविधता के खतरनाक स्थिति में पहुॅचने के निम्न कारण हैं–

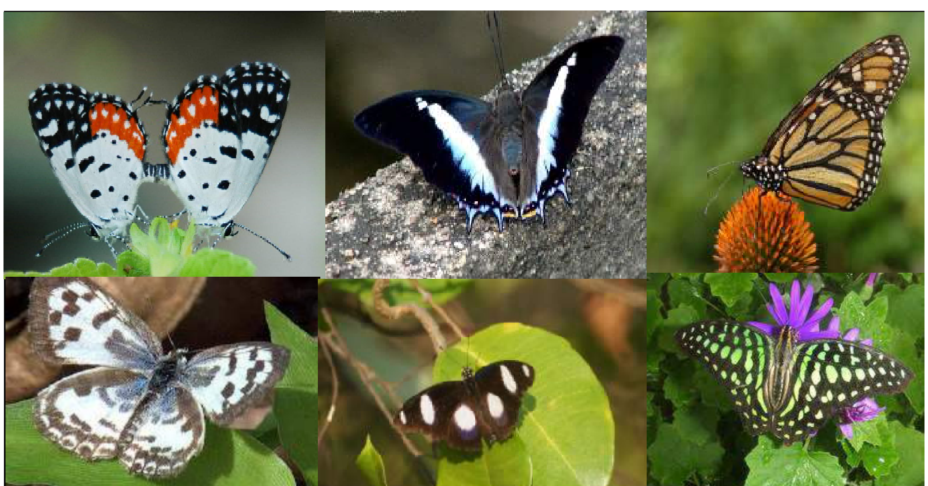

तितलियाँ– विलुप्ति के कगार पर

1. आवास का विनाश – विलुप्त होती प्रजातियों का सबसे प्रमुख कारण है उनके प्राकृतिक आवासों का नष्ट होना है। मानव ने अपने स्वार्थ की पूर्ति तथा विभिन्न आवश्यकताओं के लिए निरंतर जंगलों को काटता चला गया। वन अथवा जंगल जीव–जंतुओं व पौधों के प्राकृतिक आवास होते

हैं जिनके खत्म होने से कई प्रजातियाँ विलुप्त हो गईं। उदाहरण के लिए हमारे देश में पश्चिमी घाट पर पाई जाने वाली 370 तितलियों की प्रजातियों में से 70 प्रजातियाँ विलुप्त होने के कगार पर हैं ।

2. वन्य जीवन में अनाधिकार घुसपैठ – प्राचीन काल से ही मानव अपने शौक तथा आहार के लिए जंतुओं का शिकार करता आया है। मानव द्वारा वन्य जीवों का शिकार दिनों–दिन बढ़ता जा रहा है। वर्तमान में इसका प्रमुख कारण वन्य जीवों के खाल, सींग, दाँत, हड्डियों आदि का अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में भारी माँग है। इनकी कीमत अत्यधिक होने के कारण इनकी तस्करी अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में होती है। यही नहीं विभिन्न पादप प्रजातियों को अवैध रूप से अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में बेचा जा रहा है। उदाहरण के लिए–हमारे देश की चंदन लकड़ी तथा बहुमूल्य जड़ी बूटियाँ तस्करों के लिए सोने की खान है ।

3. अतिदोहन – प्रकृति में उपस्थित पेड़–पौधे एवं जीवों का विभिन्न प्रकार से उपयोग किया जाता है। आर्थिक रूप से प्रजातियों का उपयोग होने के साथ ही प्रयोगशालाओं में भी पादपों तथा जंतुओं का उपयोग बड़े स्तर पर होने के कारण उनकी संख्या लगातार कम होती जा रही है और वे विलुप्तता के कगार पर पहुँच रहे हैं । उदाहरण–बंदर, खरगोश, मेंढक इत्यादि ।

4. प्रदूषण – वर्तमान समय में आधुनिकीकरण एवं औद्योगिकीकरण के परिणाम स्वरूप उत्पन्न हुए प्रदूषण से स्वयं मानव जाति के साथ–साथ अन्य जैव समुदायों को भी गंभीर रूप से प्रभावित किया है। वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, मृदा प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, नाभिकीय प्रदूषण आदि से भी न जाने कितनी प्रजातियाँ विलुप्तीकरण के कगार पर पहुँच चुकी हैं। इसी प्रकार कृषि क्षेत्र में अत्यधिक रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग ने अनेक कीट प्रजातियों को समाप्त करने का कार्य किया है। इसी प्रकार औद्योगिक प्रतिष्ठानों से निकले हुए व्यर्थ जल को नदियों, तालाबों में छोड़ने से यहाँ की जलीय जैव विविधता बुरी तरह प्रभावित हुई है।

5. अन्य खतरे – उपर्युक्त खतरों के अतिरिक्त अन्य खतरे प्रजातियों को हानि पहुँचाने में भूमिका निभा रहे हैं जैसे –

1. प्राकृतिक आपदाएँ (बाढ़, सूखा, भूकंप इत्यादि)
2. जीवों की प्रजनन क्षमता में कमी
3. खाद्य श्रृंखला में जीवधारी की स्थिति
4. सामाजिक एवं आर्थिक कारण
5. परागण करने वाले स्रोतों की संख्या में कमी
6. उन्नत प्रजातियों की फसलों को उगाना।

संकट ग्रस्त जातियाँ –

ऐसे जीवों की जातियाँ जो पूरी तरह लुप्त नहीं हुए हैं, परंतु लुप्त होने के कगार पर हैं, संकटग्रस्त जातियों की श्रेणी में आते हैं। इनकी संख्या इतनी कम रह गयी है कि अगर इनका संरक्षण नहीं किया गया तो भविष्य में इनके पूरी तरह समाप्त होने की संभावना है। उदाहरण के लिए भारतीय चीता, काला हिरण, बारहसिंगा, गिद्ध, देशी मुर्गियाँ, भारतीय गायों की कई बहुमूल्य जातियाँ, देशी चावल, बाजरा, ज्वार इत्यादि।

चीता

बारहसिंगा

गिद्ध

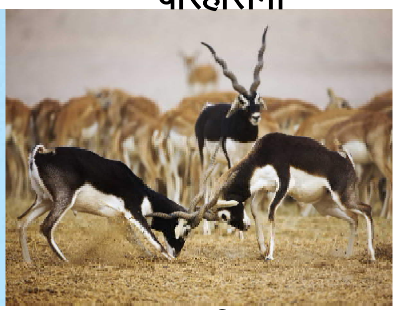

काला हिरण

संकटापन्न (खतरे में पड़ी) जातियाँ –

ऐसे जीवों की जातियाँ जिनके भविष्य में संकट में पड़ने की संभावना है, संकटापन्न जातियों की श्रेणी में आते हैं। इन जीवों की संख्या धीरे–धीरे कम होती जा रही है और चूँकि इनका उपयोग सीमित हो गया है अतः इनके घटते रहने की संभावना बढ़ती जा रही है। उदाहरण के लिए देशी गायों, भैसों, बकरियों तथा तमाम तरह के फसलों की देशी प्रजातियाँ।

इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे जीवों की जातियाँ हैं जिनका मनुष्य के द्वारा केवल शौक के लिए या दवा इत्यादि में उपयोग के कारण शिकार कर दिया जाता है फलस्वरूप इनकी संख्या में भारी गिरावट आ रही है। उदाहरण के लिए शेर, बाघ, भालू, हाथी, हिरण इत्यादि।

विलुप्त प्रजातियाँ – ऐसे जीवों की जातियाँ जो संपूर्ण धरती से गायब हो चुकी हैं और उनकी कहीं भी मिलने की संभावना नहीं है, विलुप्त जातियों की श्रेणी में आते हैं। जैसे –डायनासोर, लाल पांडा, क्यूबन लाल तोता, किंग फिसर इत्यादि।

डायनासोर

एक बार विलुप्त होने पर किसी जाति के विशिष्ट जीन कभी प्राप्त नहीं हो सकते। मानव बड़े पैमाने पर विभिन्न स्थलीय, जलीय तथा वायवीय प्राणियों का शिकार करता रहा है जिसके कारण अनेक जीव जातियाँ सदा–सदा के लिए जैवमंडल से विलुप्त हो गई हैं।

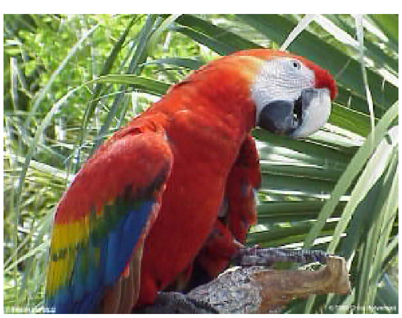

क्यूबन लाल तोता

किंगफिशर

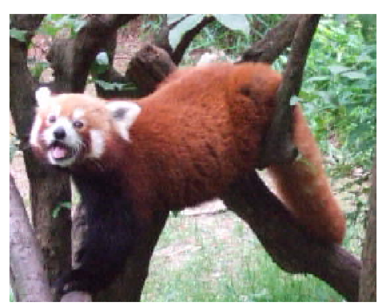

लाल पांडा

निष्कर्ष –

जैविक जातियों की उत्पत्ति और उनका एक निश्चित अंतराल के बाद समाप्त होना प्रकृति का नियम है परंतु मनुष्य के स्वार्थी एवं अमानवीय क्रियाकलापों के कारण अनेक जैविक जातियों की विलुप्ति का खतरा बढ़ गया है फलस्वरूप इनका वर्तमान में संरक्षण की महती आवश्यकता है। जैव जातियों के संरक्षण हेतु अनेक प्रोजेक्ट बनाये गये हैं तथा देशभर में अनेक राष्ट्रीय उद्यानों तथा अभ्यारण्यों की स्थापना की गई है।

प्रश्न और अभ्यास

अति लघुउत्तरीय प्रश्न

1. प्रकृति में एक जंतु विलुप्त हो जाये तो पारिस्थितिक तंत्र पर क्या प्रभाव पड़ता है ?
2. भारत में जंतुओं की लगभग कितनी जातियाँ पायी जाती हैं ?
3. भारत द्वारा विश्व को प्रदान की गई मुख्य फसलें कौन–कौन सी हैं ?
4. आर्थिक दृष्टि से जैव–विविधता के मूल्यांकन की नई शाखा को क्या कहते हैं ?
5. 'उत्पादी उपभोग मूल्य' किसे कहते हैं ?
6. विलुप्त प्रजातियाँ किसे कहते हैं ?
7. प्रत्यक्ष मूल्य को कितने भागों में विभक्त किया गया है ?

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. विभिन्न प्रजातियों के मध्य पारस्परिक निर्भरता का क्या आशय है ? स्पष्ट कीजिए।
2. ''भारतवर्ष विविध विपुलता वाला राष्ट्र है'' इस कथन की संक्षिप्त पुष्टि कीजिए।
3. 'संकटग्रस्त जातियाँ' पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
4. भारत में कृषि–उपजों की विविधता का वर्णन कीजिए।
5. जैव विविधता के आर्थिक महत्व को समझाइए।
6. जैव–विविधता की कमी में अन्य खतरे कौन–कौन से हैं ? स्पष्ट कीजिए।

निबंधात्मक प्रश्न

1. जैव–विविधता क्या है ? जैव विविधता में कमी के क्या कारण हैं ? विस्तृत वर्णन कीजिए।
2. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–

   1. संकटग्रस्त जातियाँ 2. संकटापन्न जातियाँ 3. विलुप्त जातियाँ
3. ''भारतवर्ष एक विविध विपुलता वाला राष्ट्र है।'' इस कथन का विस्तृत वर्णन कीजिए।

अध्याय – 3

जैव विविधता का संरक्षण

पाठ्यक्रम – इन सिटू तथा एक्स सिटू संरक्षण।
जनता एवं जनजीवन संघर्ष को कम करना।

जैव विविधता का संरक्षण (Conservation of Biodiversity)

जीव–जन्तुओं का समाप्त होना वर्तमान समय में सबसे गंभीर समस्या है। प्रत्येक देश के पास तीन प्रकार की सम्पदा 1. भौतिक, 2. सांस्कृतिक तथा 3. जैविक होती है। जंतु तथा पौधे किसी भी देश की धरोहर होती है। वे किसी विशिष्ट स्थान पर हुए लाखों वर्ष के विकास के परिणामस्वरूप बनते हैं। मनुष्य की जनसंख्या विस्फोटक गति से बढ़ रही है। औद्योगिक एवं कृषि विकास के कारण पर्यावरण प्रदूषित होने लगा है जिसके कारण जीवों की प्रजातियॉं नष्ट होती जा रही हैं। वर्तमान समय में नई प्रजातियों की जन्मदर घटती जा रही है लेकिन समाप्ति की दर नहीं बढ़ी है क्योंकि उनके प्राकृतिक पर्यावरण भी नष्ट हुए हैं। पशु–पक्षियों के आवास नष्ट होने, शिकार करने तथा वन्य जीवन का व्यापार करने के कारण अनेक वन्य प्रजातियॉं नष्ट हो गई हैं। इस कारण जैव प्रजातियों का संरक्षण आवश्यक है इस संरक्षण के प्रमुख कारण निम्न हैं –

1. पोषण सम्बन्धी एवं औषधीय महत्व की दृष्टि से।
2. मानव अस्तित्व को बनाए रखने हेतु।
3. पर्यावरण संतुलन हेतु।
4. दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु।
5. पृथ्वी के बढ़ते तापमान को कम करने हेतु।
6. ओजोन स्तर के ह्रास को कम करने हेतु।
7. वनो एवं जैविक परिपूर्णता के संरक्षण हेतु।

जैव–विविधता के संरक्षण के उपाय

जैव विविधता के महत्व को देखते हुए इसका संरक्षण अतिआवश्यक है। जैव विविधता का संरक्षण दो विधियों द्वारा किया जा सकता है –

(1) स्वस्थान संरक्षण (In-situ Conservation) – वह संरक्षण जो उस स्थान में हो जहॉं पादप या प्राणी पाये जाते हैं, इन–सिटू संरक्षण कहलाता है। दूसरे शब्दों में जीवों के मूल आवास में ही यदि उनको संरक्षित किया जाये तो वह इन–सिटू संरक्षण कहलाता है। उदाहरण के लिए कुछ प्राणी एक निश्चित वन में पाये जाते हैं उन प्राणियों का संरक्षण उनके उसी प्राकृतिक आवास में कर दिया जाता है तो यह इन–सिटू संरक्षण (स्वस्थान संरक्षण) कहलाता है। इसके अन्तर्गत राष्ट्रीय उद्यान, अभ्यारण्य इत्यादि आते हैं।

प्राचीनकाल से ही हमारे देश में वन्य प्राणियों एवं पादपों का संरक्षण किसी न किसी रूप में किया जा रहा है। पौधों एवं जन्तुओं का धार्मिक महत्व समझाकर उनका संरक्षण किया जाता रहा है। जनजातियों में तो पादपों और जन्तुओं के नाम से स्थानीय जातियों के गोत्र होते हैं जिससे वे अपने गोत्र की रक्षा के लिए जीवों का संरक्षण करते हैं। वर्तमान में शासकीय संस्थाएं संरक्षण का कार्य कर रही हैं। इन–सिटू संरक्षण के अन्तर्गत अभ्यारण्य, राष्ट्रीय उद्यान, प्राणी उद्यान तथा विभिन्न प्रोजेक्ट चलाकर संरक्षण का कार्य किया जा रहा है।

आज भारत में 27 राष्ट्रीय उद्यान, 413 अभ्यारण्य हैं जो देश के भौगोलिक क्षेत्र के 4 प्रतिशत भाग तक फैली है।।

1. अभ्यारण्य (Sanctuaries) – ऐसा क्षेत्र या शरण स्थल जो वन्य जीवों के बचाव और देख–रेख के लिए संरक्षित होता है तथा जहाँ कुछ सीमा तक मानवीय क्रिया–कलाप जैसे घास काटना, कृषि आदि की अनुमति होती है, अभ्यारण्य कहलाता है। भारत में कुछ महत्वपूर्ण अभ्यारण्य निम्न हैं–

1. अन्नामलाई (तमिलनाडु)
2. शिकारी देवी (हिमाचल प्रदेश)
3. पेरियार (केरल)
4. रानीपुर (उत्तराखण्ड)
5. सरिस्का (राजस्थान)
6. पलामू (झारखण्ड)
7. नागार्जुन सागर (तेलंगाना)
8. बारनवापारा (छत्तीसगढ़)

नागार्जुन सागर अभ्यारण्य

2. राष्ट्रीय उद्यान (National Park) – वह संरक्षित क्षेत्र जो वन्य जीवों की उन्नति व विकास के लिए आरक्षित होता है तथा जहाँ वृक्ष उन्मूलन, चारण, आखेट तथा अन्य मानवीय क्रिया–कलापों पर पूर्ण रूप से प्रतिबन्ध होता है, राष्ट्रीय उद्यान कहलाता है।

भारत में कुछ महत्वपूर्ण राष्ट्रीय उद्यान निम्न हैं–

1. कार्बेट राष्ट्रीय उद्यान (उत्तराखण्ड)
2. सुन्दरवन राष्ट्रीय उद्यान (पश्चिम बंगाल)
3. गिर राष्ट्रीय उद्यान (गुजरात)
4. बांधवगढ़ राष्ट्रीय उद्यान (उत्तरप्रदेश)
5. दुधवा राष्ट्रीय उद्यान (उत्तरप्रदेश)
6. बांदीपुर राष्ट्रीय उद्यान (कर्नाटक)
7. कांगेर घाटी राष्ट्रीय उद्यान (छत्तीसगढ़)
8. रणथंभोर राष्ट्रीय उद्यान (राजस्थान)

कुछ संकटापन्न वन्य प्राणियों के संरक्षण के लिए हमारे देश में विशिष्ट परियोजनाएँ चलाई जा रही हैं। जिससे इन विशिष्ट प्राणियों को बचाने की कोशिश की जा रही है। इनमें से कुछ परियोजनाएं निम्न हैं –

1. बाघ परियोजना (Project Tiger) – इसके अन्तर्गत भारत सरकार ने कुछ राष्ट्रीय उद्यानों एवं अभ्यारण्यों को वैधानिक रूप से बाघ आरक्षित क्षेत्र के रूप में मान्यता दी है। जैसे इन्द्रावती टाइगर प्रोजेक्ट दंतेवाड़ा (छत्तीसगढ़)।

2. मगर परियोजना (Crocodile Project) – इस परियोजना हेतु अभ्यारण्यों का चुनाव किया गया है जैसे कृष्णा अभ्यारण्य (तेलंगाना), चम्बल अभ्यारण्य (मध्यप्रदेश)।

3. हाथी परियोजना (Elephant Project) – इस परियोजना के अन्तर्गत हाथियों के विकृत आवास सुधारकर उनकी संख्या में वृद्धि करना है।

इसके अतिरिक्त आर्द्र भूमि, मैग्रूव वनस्पति तथा प्रवालभित्तियों को संरक्षित करने के लिए भी परियोजनाएँ चलाई जा रही हैं।

मगर परियोजना

(2) परस्थान संरक्षण (Ex-situ Conservation) – प्राणियों को उनके प्राकृतिक आवास से हटाकर अलग स्थान पर किए गये संरक्षण को पर स्थान या एक्स सिटू कन्जरवेशन कहते हैं। सामान्यतः वानस्पतिक उद्यान, चिड़िया घर, प्राणि उद्यान, कृत्रिम जलकुण्ड, कृषि अनुसंधान केन्द्र, वानिकी अनुसंधान केन्द्र जीव प्रजातियों के कृत्रिम आवास होते हैं जहॉं इनको संरक्षित रखा जाता है, ऐसे प्रयास वैसे क्षेत्रों में किये जाते हैं जहॉं भोजन, पानी, आवास, दावानल या कठिन जीवन परिस्थितियॉं होती हैं।

परस्थान संरक्षण के तरीके (Methods of Ex-Situ Conservation)

इसके अन्तर्गत निम्न तकनीकों को प्रयोग में लाया जाता है –

1. बीज भंडार, जीन भंडार या जर्म प्लाज्म भंडार – बीज भंडार में बीज लम्बी निद्रा के बाद भी अंकुरित हो सकते हैं। जहॉं ऐसे बीजों का भंडारण होता है बीज भंडार कहते हैं। जीन भंडार में जीवों के किसी ऐसे जीवित भाग को संरक्षित किया जाता है जिससे जीव पुनः विकसित किया जा सकता है। इसी प्रकार जर्म प्लाज्म को भी संरक्षित किया जाता है।

2. लम्बी अवधि संरक्षित प्रजनन – लुप्त प्राय जीवों को लम्बी अवधि तक निगरानी में प्रजनन करवाया जाता है तथा समुचित संख्या होने पर उनके प्राकृतिक आवासों में पहुॅंचा दिया जाता है। उदाहरण–शेर, हिरण इत्यादि।

3. छोटी अवधि संरक्षित प्रजनन – इनके प्राकृतिक आवासों में ही समुचित आबादी होने तक संरक्षित प्रजनन की विधि भी विलुप्त प्राय जीवों के लिए मददगार साबित हुई है। उदाहरण चीता, भेड़िया इत्यादि।

4. जानवरों का स्थान परिवर्तन (Animal Translocations)– प्राणियों को जंगल से पकड़कर दूसरे इलाकों में जहॉं सुविधाऍं उपयुक्त हैं–भेज देना ही उनका कृत्रिम स्थान परिवर्तन कहलाता है।

इसके लिए निम्न बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए

1. जब जानवरों से मनुष्य के जीवन को खतरा हो।
2. जब कोई जीव कमजोर हो।
3. आवास का नष्ट होना, बेलगाम शिकार या अन्य कारण।
4. आश्रित जीवों का पलायन हो गया हो।
5. आबादी अधिक हो जाने पर।

5. जानवरों की वापसी (Animal Reintroduction) – संरक्षण में जीवों की आबादी को विकसित कर वापस प्राकृतिक आवास में छोड़ना हो उनकी वापसी कहलाती है।

6. कृत्रिम प्रजनन (Artificial insemination) – जैव विविधता को सुरक्षित रखने का यह एक कारगर तरीका है जिसमें मादाओं को कृत्रिम ढंग से गर्भाधान कराया जाता है।

7. वानस्पतिक उद्यान (Botanical Gardens) – वानस्पतिक उद्यान एक ऐसा क्षेत्र है जहॉ फूलों एवं सब्जियों को उगाया जाता है। ये सौन्दर्य, स्वच्छ वातावरण व विदेशी प्रजातियों की प्रदर्शनी व शिक्षण के लिए लगाये जाते हैं। विश्व के लगभग 600 वनस्पति उद्यानों में कई विलुप्त प्राय पौधों के अस्तित्व को बरकरार रखा गया है।

8. प्राणि उद्यान (Zoo) – जिस प्रकार पौधों को वानस्पतिक उद्यान में लगाया जाता है वैसे ही संरक्षित प्राणी को प्राणी उद्यान में रखकर उसके भोजन, प्रजनन इत्यादि की व्यवस्था कर उसे संरक्षित किया जाता है।

जनता (मानव) एवं वनजीवन संघर्ष को कम करना

मनुष्य व वन्य जीवों का सम्बन्ध आदिकाल से ही रहा है। एक समय था जब मनुष्य पूर्ण रूपेण प्राकृतिक आवासों पर ही निर्भर था। प्रत्येक जीवधारी का अपना स्वयं का वासस्थान तथा निकेत होता है। वासस्थान किसी भी जीवधारी के निवास स्थान का पता है तथा निकेत उसके व्यवसाय या कार्यात्मक पहलू को प्रदर्शित करता है। निकेत को निम्नानुसार परिभाषित किया जा सकता है–''निकेत एक ऐसा विशिष्ट स्थान होता है जहॉ से जीवधारी को अपने भोजन की आपूर्ति होती है।''

मनुष्य के क्रियाकलापों से जब जीवधारियों के वास स्थान नष्ट हो जाते हैं तो उस स्थिति में निकेत का फैलाव भी कम रह जाता है। ऐसी स्थिति में खाद्य जाल असंतुलित हो जाता है। ऐसी स्थिति में वन्य जीव अपने प्राकृतिक वास स्थानों से पलायन करके मनुष्य के निवास स्थानों, कृषि क्षेत्रों की तरफ आ जाते हैं जहॉ उन्हें मनुष्यों द्वारा विभिन्न कारणों से मार दिया जाता है। इस प्रकार यह प्रवासीय संघर्ष ही मानव एवं वन्यजीवों के बीच संघर्ष की धूरी को जन्म देता है।

मनुष्य की जनसंख्या में वृद्धि के कारण ही मानव वन्य जीव संघर्ष में भी बढोत्तरी हो रही है। जैव–विविधता एक ऐसा संसाधन है जो यदि एक बार समाप्त हो जाए तो उसे दोबारा से नहीं बनाया जा सकता है अर्थात इसका विलुप्तीकरण हमेशा के लिए हो जाता है। आज वैज्ञानिकों के पास ऐसा कोई उपाय नहीं है जिससे भूतकाल में विलुप्त हुए जीव को पुनः उत्पन्न किया जा सके। अतः जैव विविधता का संरक्षण करना एक वैश्विक चिंता का विषय बन गया है इसका संरक्षण जनता एंव वन जीवन के संघर्ष को कम करके किया जा सकता है।

मानव–वन्य जीव संघर्ष के उदाहरण –

1. वनवासियों तथा वन्यजीवों में संघर्ष– प्राचीन काल से ही वनवासी जंगलों में रहते आये हैं। इनका जीवन निर्वाह वनों से प्राप्त वनोपज एवं लकड़ियों से होता आया है। वनो के निरंतर ह्रास तथा वनों की भूमि राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण के रूप में संरक्षित किये जाने के कारण ये अपने अस्तित्व हेतु संघर्ष करेन को मजबूर हुए है

2. नगरीय समुदाय के साथ वन्यजीव संघर्ष– वनों की अंधाधुंध कटाई, बढते औद्योगीकरण, बढ़ती जनसंख्या के कारण वनों का क्षेत्रफल काफी सीमित हो गया है जिससे वन्यजीव नगरों एवं कृषि क्षेत्रों की तरफ विचरण कर जाते हैं जिससे आये दिन नगरीय समुदाय एवं वन्यजीवों के साथ संघर्ष होता रहता है।

3. विदेशी तथा स्थानीय पादप जातियों का परस्पर संघर्ष– किसी नये स्थान पर विदेशी प्रजातियों का प्रवेश विनाशकारी परिणाम देता है। प्रकृति में ऐसे अनेक उदाहरण हैं जहॉ पर विदेशी जातियों का प्रवेश कराने पर स्थानीय समुदाय असंतुलित हुआ है अथवा पूर्ण रूप से नष्ट हो गया है उदाहरण के लिए शहरों, नगरों तथा सड़कों के सौन्दर्यीकरण के लिए विदेशी प्रजाति का यूकेलिप्टस को रोपित किया गया। यूकेलिप्टस पौधा हरित क्रांति लाने के स्थान पर उन स्थानों को हरे रेगिस्तान में परिवर्तित कर रहा है।

अन्य विदेशी पादप प्रजातियॉ जैसे जलकुम्भी, गाजर घास, विलायती बबूल जैव विविधता के लिए खतरा उत्पन्न कर रहे हैं।

मानव–वन्यजीव संघर्ष को कम करना

प्राचीन काल से ही हमारे देश में वन्यजीवों एवं पादपों का संरक्षण किसी न किसी रूप में किया जा रहा है। वन एवं वन्य जीवों के प्रति स्नेह तथा आदर की भावना रखना हमारे देश भारत की संस्कृति का एक अंग रहा है। यहॉ वृक्षों, तालाबों, नदियों की पूजा आदिकाल से होती आ रही है।

मानव–वन्यजीव संघर्ष को कम करने हेतु निम्न उपाय सुझाये जा सकते हैं–

1. मानव वन्यजीव संघर्ष को वन्यजीवों के प्राकृतिक वासस्थान को सुधारकर किया जा सकता है, प्रत्येक वन्यजीव समूह की आवश्यकताएँ अलग–अलग होती हैं। अतः वास स्थलों में सुधार करते समय यहॉ पर जीवन–यापन करने वाली जाति विशेष की प्राकृतिक आवश्यकताओं का समग्र तौर पर ध्यान रखा जाना चाहिए। प्राकृतिक वास स्थानों में सुधार करते समय वहॉ पर वन्यजाति विशेष के अनुसार भोजन, पानी सुरक्षा इत्यादि की विशेष व्यवस्था करनी चाहिए ताकि वन्यजीव मानव बस्तियों की तरफ भूलकर भी नहीं जावे तथा इसका परिणाम मानव–वन्यजीव संघर्ष के रूप में उजागर नहीं हो।

2. प्राकृतिक आवासों के साथ–साथ वन्यजीवों के ऋतु प्रवास स्थलों को भी संरक्षित किया जाना चाहिए।

3. राष्ट्रीय उद्यानों एवं अभ्यारण्यों के माध्यम से वन्यजीवों के महत्व को प्रचारित किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष

मानव एवं वनजीवन के मध्य संघर्ष अनिवार्य रूप से नियन्त्रित हो जाना चाहिए क्योंकि वन्यजीव जहॉ एक ओर जैव–विविधता में अभिवृद्धि करते हैं वहीं दूसरी ओर ये पर्यावरण की शुद्धता के सूचक भी होते हैं ये स्वच्छ पर्यावरण को निर्मित करते हैं।

प्रश्न और अभ्यास

अति लघुउत्तरीय प्रश्न

1. स्व–स्थान (इन–सिटू) संरक्षण को परिभाषित कीजिए।
2. भारत के किन्हीं दो प्रमुख राष्ट्रीय उद्यानों के नाम लिखिए।
3. छत्तीसगढ़ में बाघ परियोजना कहाँ पर स्थित है ?
4. 'लम्बी अवधि संरक्षित प्रजनन' से क्या आशय है ?
5. कृत्रिम प्रजनन का क्या तात्पर्य है ?
6. नगरीय समुदाय के साथ वन्यजीव संघर्ष के क्या कारण हैं ?

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. जैव–प्रजातियों का संरक्षण क्यों आवश्यक है ?
2. परस्थान (एक्स–सिटू) संरक्षण के कौन–कौन से तरीके हैं ? संक्षिप्त में वर्णन कीजिए।
3. मानव वन्य–जीव संघर्ष को किस प्रकार कम किया जा सकता है ?
4. राष्ट्रीय उद्यान पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
5. अभ्यारण्य एवं राष्ट्रीय उद्यान में क्या अन्तर हैं ?

निबन्धात्मक प्रश्न

1. जैव–विविधता के संरक्षण से क्या आशय है ? जैव प्रजातियों का संरक्षण क्यों आवश्यक है? परस्थान संरक्षण में राष्ट्रीय उद्यान एवं वनस्पति उद्यान का क्या महत्व है ?
2. मानव (जनता) एवं वनजीवन संघर्ष को कम करने के विभिन्न उपायों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
3. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए –
    1. स्व–स्थान संरक्षण
    2. परस्थान संरक्षण।

अध्याय – 4

पर्यावरण प्रबन्धन

पाठ्यक्रम – पर्यावरण प्रबन्धन की आवश्यकता।
पर्यावरण प्रबन्धन के प्रमुख पहलू–इथिकल, आर्थिक, तकनीकी, एवं सामाजिक पहलू।
पर्यावरण प्रबन्धन के कानूनी प्रावधान।

पर्यावरण प्रबन्धन की आवश्यकता (Need for Environmental Management)

समस्त ब्रह्मांड में पृथ्वी ही एकमात्र आवास योग्य स्थान प्रदान करती है। पृथ्वी पर पर्यावरण असंतुलन आज विश्व की ज्वलंत समस्या है। वर्तमान समय में भारत का एक सुन्दर हिरण, काला मृग, एक सींग वाला गेंडा, महाकाय पांडा, भारतीय गधा, गिद्ध इत्यादि विलुप्त होने के कगार पर है। जब जीव की कोई जाति विलुप्त होती है तो हम सदैव के लिए सजीव जगत के एक अंग को खो देते हैं साथ ही साथ इससे खाद्य श्रृंखला नष्ट होती है तो पर्यावरण एवं जन्तु जगत का संतुलन बिगड़ जाता है। यदि खाद्य श्रृंखला नष्ट होती है तो पर्यावरण नष्ट हो जायेगा फलस्वरूप मानव स्वयं विलुप्त हो जावेगा। अतः मानव स्वयं की स्वार्थसिद्धि छोड़कर पूर्ण मनोयोग से पर्यावरण प्रबन्धन करे एवं उसमें योगदान दे।

भारतीय गेंडा

पर्यावरण दो शब्दों परि और आवरण से मिलकर बना है। परि का अर्थ है सभी ओर तथा आवरण का अर्थ है घेरा अर्थात जो हमें सभी ओर से घेरे हुए हैं वही पर्यावरण है।

बढ़ते औद्योगीकरण, शहरीकरण के कारण मानव ने विभिन्न प्रकार के विकास किये जिससे पर्यावरण में पर्यावरणीय घटकों का अनुपात परिवर्तित हो गया है एवं उसमें हानिकारक एवं अवांछनीय तत्वों का प्रवेश कर गया है जिससे पर्यावरण प्रदूषित हो गया है। मनुष्य, जीव–जन्तु तथा वनस्पतियों को विशुद्ध पर्यावरण प्राप्त हो इस हेतु पर्यावरण प्रबन्धन की आवश्यकता है।

विभिन्न प्रदूषणों के प्रभाव एवं प्रबन्धन

(1) वायु प्रदूषण के प्रभाव

(Effects of Air Pollution)

वायु प्रदूषण के प्रभाव को निम्नलिखित दो वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

(क) तात्कालिक प्रभाव **(Immediate effects)**

(ख) दीर्घकालिक प्रभाव **(Long term effects)**

(क) तात्कालिक प्रभाव **(Immediate effects)** इसका आशय ऐसे प्रभावों से है जो किसी कारण से प्रयुक्त होते ही अपने लक्षण प्रदर्शित करते हैं, जैसे–वाहनों तथा कारखानों से निकलने वाले धुएँ युक्त वातावरण में श्वास लेने पर गले तथा आँखों में जलन होना आदि।

(ख) दीर्घकालिक प्रभाव **(Long term effects)** इसमें ऐसे प्रभाव आते हैं जो शीघ्र ही दिखाई नहीं देते अपितु कुछ समय पश्चात् अपने लक्षण प्रदर्शित करते हैं। उदाहरणस्वरूप–वायुमण्डल के निचले स्तर में गैसों की संरचना में परिवर्तन, वायुमण्डल की निचली परत में विभिन्न प्रदूषक तत्वों एवं कणों का एकत्रीकरण एवं वायु भार में परिवर्तन।

वायु प्रदूषण के प्रभावों को निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत स्पष्ट किया जा सकता है।

(1) मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव **(Effects on human health)** - वायु प्रदूषण से मनुष्य के स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। इससे श्वसन–सम्बन्धी बहुत से रोग, जैसे–फेफड़ों का कैंसर, अस्थमा और फेफड़ों से सम्बन्धित दूसरे रोग हो जाते हैं। वायु में वितरित बहुत–सी धातुओं के कण बहुत से रोग उत्पन्न करते हैं। सीसे के कण विशेष रूप से नाड़ी–मण्डल **(nervous-system)** में रोग उत्पन्न करते हैं। नाइट्रोजन ऑक्साइड से फेफड़ों, हृदय और आँखों में बहुत से विकार उत्पन्न होते हैं। ओजोन भी आँखों के रोग, खांसी व सीने में दर्द उत्पन्न करती है।

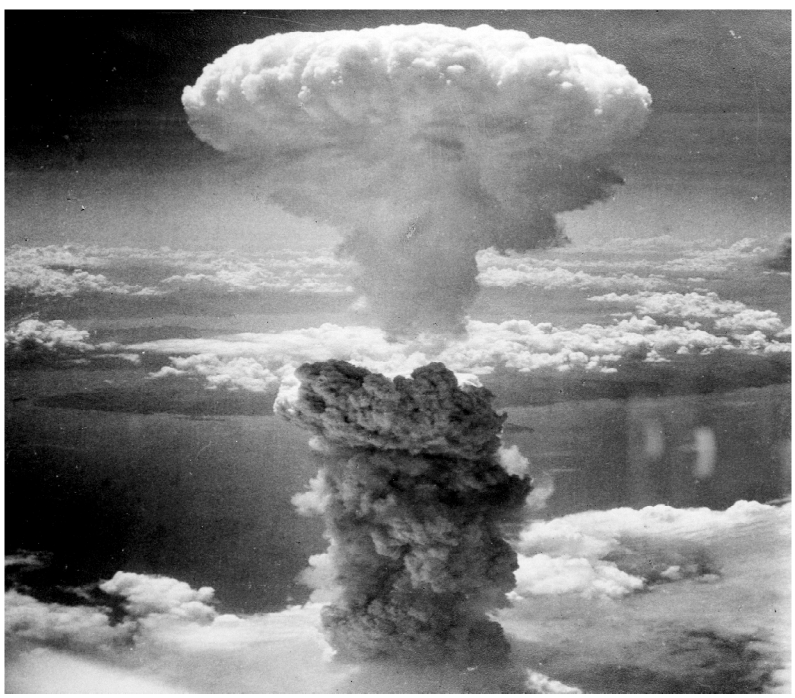

नागाशाकी पर परमाणु बम

वातावरण में कार्बन मोनो ऑक्साइड उपस्थित होने से मनुष्य के रक्त में हीमोग्लोबीन के अणु ऑक्सीजन की तुलना में 200 गुना अधिक तेजी से कार्बन डाइऑक्साइड के अणुओं से जुड़ने लगते हैं जिससे श्वसन में घुटन महसूस होने लगती है। अधिक समय तक इस परिस्थिति में रहने पर दम घुटने से मृत्यु तक हो जाती है।

रासायनिक गैस संयन्त्रों तथा नाभिकीय परियोजनाओं से वायुमण्डल में निस्तारित होने वाले विभिन्न विषैले रासायनिक एवं रेडियोधर्मी पदार्थ अपना दीर्घकालिक प्रभाव मनुष्यों के स्वास्थ्य पर छोड़ते हैं। उदाहरणस्वरूप–1984 को भारत में हुए भोपाल गैस त्रासदी में मिथाईल आइसोसाइनेट के रिसाव के कारण अनेक लोग मारे गये थे जबकि इस गैस के प्रभाव के कारण अनेक गर्भवती महिलाओं के गर्भस्थ शिशु मरे हुए पैदा हुए थे। इसी प्रकार हिरोशिमा व नागासाकी पर द्वितीय विश्व युद्ध में गिराये गये अणु बमों के विकिरणों के प्रभाव से आज भी वहां बहुत से शिशु अपंग तथा मानसिक रूप से विक्षिप्त पैदा होते हैं।

(2) अन्य प्राणी जातियों पर प्रभाव (Effect on other animal species) - मनुष्य के समान ही वायु प्रदूषण अन्य प्राणियों में भी श्वसन सम्बन्धी विकार उत्पन्न करता है। वायु में उपस्थित अत्यधिक कीटनाशकों व अन्य विषैले रसायनों के कारण सबसे अधिक प्राणि जातियॉं प्रभावित होती हैं। वायुमंडल में उपस्थित क्लोराइड यौगिकों के जन्तुओं के चारे (घास, जंगली पेड़–पौधे) , पर अवपात के फलस्वरूप पशुओं के शरीर में प्रवेश कर हड्डियों में विकार उत्पन करते हैं। इसी प्रकार सल्फर डाइऑक्साइड की उपस्थिति में मृदा में उपस्थित जीवाणुओं की सक्रियता अत्यधिक प्रभावित होती है जिसका सीधा प्रभाव वनस्पतियों पर पड़ता है।

(3) वनस्पतियों पर प्रभाव (Effects on vegetations) - वायु प्रदूषण का वनस्पति पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। क्लोरोफ्लोरोकार्बन, सल्फर डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड इत्यादि वायु प्रदूषकों की उपस्थिति से ओजोन की कमी तथा वायुमण्डल के हरित गृह प्रभाव में वृद्धि होती है जिसके कारण वायुमण्डल के ताप में वृद्धि होने से वनस्पतियॉं नष्ट हो जाती हैं। वायुमंडल में अत्यधिक विवक्त कणों तथा प्रकाश–रासायनिक कोहरे के कारण पृथ्वी पर पहुॅंचने वाले सूर्य के प्रकाश में कमी आती है जिसके कारण पौधों की भोजन निर्माण क्रिया (प्रकाश –संश्लेषण) बाधित होती हैं। जिसका प्रत्यक्ष व प्रतिकूल प्रभाव इनकी वृद्धि पर पड़ता है। घूल, धुऑं तथा अन्य कणिकाएॅं वनस्पतियों की पत्तियों की सतह पर जम जाते हैं जिससे इनके पर्ण रन्ध्र बन्द हो जाने से वाष्पोर्त्सजन की क्रिया में व्यवधान पड़ता है।

(4) पदार्थों पर प्रभाव (Effects on materials) – वायु प्रदूषण करने वाले वायु प्रदूषक जीव जन्तुओं,

ताज महल अम्लीय वर्षा से धुधला होता जा रहा है।

वनस्पतियों को प्रभावित करने के साथ–साथ विभिन्न पदार्थों पर भी अपना दुष्प्रभाव डालते हैं। वायुमंडल में सल्फर डाइऑक्साइड, सल्फर ट्राइऑक्साइड तथा जल रासायनिक क्रिया करके सल्फ्यूरिक अम्ल (H_2SO_4) बनाते हैं जो अम्लीय वर्षा के रूप में पृथ्वी पर गिरता है। धात्विक सतहें (लोहा, तांबा, ऐल्यूमिनियम, जस्ता) अम्ल वर्षा के संपर्क में आने पर क्षयित हो जाती है और अपना ही सल्फेट यौगिक बना लेती हैं। चूना पत्थर तथा संगमरमर से बनी विभिन्न इमारतें एवं भवन अम्लीय वर्षा के संपर्क में आने के कारण अपनी चमक के साथ सामर्थ्य को भी खो देती हैं। उदाहरण के लिए विश्व प्रसिद्ध आगरा का ताजमहल अम्लीय वर्षा के कारण अपनी चमक खोता जा रहा है। इसी प्रकार रंजकों **(paints)** में उपस्थित सीसा हाइड्रोजन सल्फाइड (H_2S) से क्रिया करके सीसा सल्फाइड **(PbS)** बनाता है जिससे पेण्ट्स की हुई सतह का भूरा रंग, काला पड़ जाता है।

(5) मौसम एवं जलवायु पर प्रभाव (Effects on Weather and climate) - वायु प्रदूषण की प्रक्रिया के अनवरत रूप से चलते रहने से उस क्षेत्र विशेष के मौसम में वायु प्रदूषकों का हस्तक्षेप होना कोई आश्चर्यचकित कर देने वाली घटना नहीं है। इस तरह की घटना होना उस समय ही निश्चित हो जाता है जब वायुमण्डल में प्रदूषक पदार्थों की सान्द्रता में अप्रत्याशित रूप से वृद्धि होती है। औद्योगिक नगरों में होने वाली असमय वर्षा तापमान में वृद्धि तथा प्रकाश की मात्रा में कमी तथा धुन्ध एवं कोहरे का छाया रहना आदि वायु प्रदूषण की ही देन है।

शहर में प्रदूषण के कारण कोहरा

वायु प्रदूषण नियंत्रण के उपाय

(CONTROL MEASURES OF AIR POLLUTION)

वायु प्रदूषण आज एक विकराल रूप धारण कर चुका है यदि इसे जल्दी नियंत्रित नहीं किया गया तो यह सम्पूर्ण जैवमण्डल को फिर से आदि–स्वरूप में पहुँचा देगा। अतः वायु प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न उपाय किये जाने की आवश्यकता है।

(अ) घरेलू प्रदूषण को नियंन्त्रित करने के उपाय

1. घरों में धुऑ–रहित ईंधनों के उपयोग को बढ़ावा दिया जाना चाहिये। लकड़ी, कोयला, उपले इत्यादि पारम्परिक ईंधनों के स्थान पर विद्युत हीटर, कुकिंग गैस, सौर ऊर्जा से चालित उपकरण इत्यादि का प्रयोग वायु प्रदूषण को नियन्त्रित करता है।

2. घरेलू कूड़े–करकट (फलों, सब्जियों के छिलके आदि) को खुले स्थानों पर नहीं फेंककर मिट्टी की गहरे गड्ढों को खोदकर उनमें दबा देना चाहिए। जिससे उनके सूक्ष्मजीवों द्वारा अपघटन से जैवीय खाद **(bio-fertilizer)** का निर्माण हो जाये तथा इनके अपघटन के दौरान उठने वाली दुर्गन्ध से भी बचा जा सकता है।

3. कच्चे कोयले व कच्ची लकड़ी के जलने पर प्रतिबंध लगाया जाये क्योंकि उससे अधिक कार्बन डाइआक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड तथा कार्बन कण उत्सर्जित होते हैं।

4. घर में खिड़की, दरवाजों तथा रोशनदानों का समुचित प्रबंध होना चाहिये तथा रसोईघरों में चिमनी की व्यवस्था करनी चाहिये।

(ब) वाहनिक प्रदूषण को नियन्त्रित करने के उपाय

1. वाहन निर्माण करने वाली कंपनियों को ऐसे आन्तरिक दहन इंजनों का निर्माण करना चाहिये जिससे वाहनों में प्रयुक्त होने वाले ईंधन का सम्पूर्ण दहन हो जाये तथा प्रदूषक पदार्थ कम मात्रा में उत्सर्जित हों।

2. सीसा–रहित पेट्रोल तथा डीजल में संयोजी पदार्थों को मिलाकर वाहनों में प्रयोग करने से वायु प्रदूषण को कम किया जा सकता है।

3. डीजल रेल के इंजनों के स्थान पर विद्युत चालित रेल इंजनों का उपयोग किया जाना चाहिये।

4. अत्यधिक वायु प्रदूषणकारी वाहनों पर पाबंदी तथा अन्य वाहनों से उत्पन्न धुएँ का मानकीकरण से अधिक स्तर होने पर कानूनी कार्यवाही का प्रावधान होना चाहिये।

5. बैटरी चालित वाहनों का अधिकाधिक उपयोग किया जाना चाहिये।

(स) औद्योगिक प्रदूषण को नियन्त्रित करने के उपाय

1. जिन उद्योगों में दहन प्रक्रम प्रयुक्त होता है उनकी निर्माणक ईकाइयों में पर्याप्त ऊँची चिमनियों की समुचित व्यवस्था करनी चाहिये।

2. औद्योगिक प्रतिष्ठानों से उत्सर्जित होने वाले कणिकीय प्रदूषकों के निस्तारण के लिए बैग फिल्टर को चिमनियों से जोड़ना चाहिये। फैब्रिक फिल्टर या हाई एनर्जी स्क्रेबर उपकरणों का प्रयोग करके धुएँ से होने वाले दुष्प्रभावों से बचा जा सकता है।

3. निर्माणक ईकाइयों में दुर्घटना से बचने तथा नियंत्रण के लिए सम्पूर्ण प्रबंध होना चाहिये।

4. उद्योगों में उच्च कोटि के तथा कम प्रदूषणकारी कच्चे माल को ही प्रयुक्त किया जाना चाहिये।

(द) अन्य उपाय

1. परमाण्विक परियोजनाओं से निकले रेडियोधर्मी पदार्थों को शीघ्र ही विघटनीय पदार्थ में बदल देना चाहिये।

2. परमाणु बमों तथा अन्य हानिकारक नाभिकीय परीक्षणों का सीमांकन करना चाहिये।

3. रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों का संतुलित उपयोग किया जाना चाहिये।

(2) जल प्रदूषण का प्रभाव

(Effects of Water Pollution)

जल जीवों के प्रथम उपभोग की वस्तु है। जल का उपयोग जैविक एवं अजैविक क्रियाओं में अनेक रूपों में किया जाता है। अनेक संसाधनों के सफल संचालन एवं विकास के लिए जल सहायक है। आज सभी देशों में दुर्भाग्यवश जलराशियॉ कूड़ा–करकट, नगरीय एवं औद्योगिक कचरा एवं विषैले पदार्थों के निस्तारण का जल ही माध्यम बन गया है। अन्य प्रदूषणों की भॉति जल प्रदूषण ने भी आज के युग में गम्भीर समस्या का रूप धारण कर लिया है।

जल प्रदूषण के विभिन्न कुप्रभाव निम्नलिखित हैं –

प्रदूषित नदी

(अ) जलीय जीव पर प्रभाव (Effects on Aquatic Life) -

विभिन्न प्रकार के जल स्त्रोत, जैसे–नदियॉ, तालाब, पोखर, झील, झरने एक प्रकार से पूर्ण पारिस्थितिक तन्त्र हैं इनमें अनेक प्रकार की जीव–जन्तु एवं वनस्पतियॉ जो अजैविक घटकों के साथ अपना सामंजस्य बनाए रखते हैं। समस्त जैविक घटक सम्मिलित रूप से एक खाद्य–श्रृंखला का निर्माण करते हैं। विभिन्न प्रकार से जल प्रदूषित हो जाने के कारण वनस्पति एवं जीव–जन्तु तत्काल प्रभावित हो जाते हैं जिससे जलीय पादपों एवं जीवों पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

जलीय प्रदूषण का वनस्पतियों एवं जीव–जन्तुओं पर पड़ने वाले प्रभावों का विस्तृत वर्णन निम्नानुसार है –

(1) वनस्पतियों पर प्रभाव (Effects on Vegetations) -जल प्रदूषण से पौधों पर निम्नलिखित प्रभाव पड़ता है –

1. कृषि बहिःस्राव द्वारा प्रदूषित जल में पौधों के पोषक तत्व उपस्थित होने के कारण शैवाल इत्यादि

अधिक विकसित होते हैं, जिससे सूक्ष्म जीवाणुओं की तीव्र वृद्धि होती है, जो जलीय O_2 को कम कर देते हैं। ऐसी परिस्थिति में अधिकांश पौधे नष्ट हो जाते हैं।

2. यदि जल का प्रदूषण वाहित मल द्वारा होता है तो जल की ऊपरी सतह पर विभिन्न रोगों के मल कवक **(Sewage Fungus)** फैल जाते हैं जिनमें विभिन्न प्रकार के जीवधारियों का समुदाय पाया जाता है। जैसे–कवक, जीवाणु, शैवाल, म्यूकर एवं मांस इत्यादि। जो अन्य पादप जातियों की वृद्धि में हस्तक्षेप करते हैं।

3. प्रदूषित जल में मल कवक का आवरण उपस्थित होने के कारण एवं जल में काई पाये जाने के कारण सूर्य प्रकाश जल के अन्दर तक नहीं पहुँच पाता है, फलतः जलीय पौधों में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया बाधित होती है।

4. जल प्रदूषण के कारण जल के तापमान में वृद्धि हो जाती है जिससे पौधों में रसाकर्षण न होने के कारण वे सूखकर मर जाते हैं।

5. कीटनाशियों जैसे डी.डी.टी. तथा अन्य रोगनाशकों द्वारा प्रदूषित जल में पाये जाने वाली वनस्पतियों में प्रकाश–संश्लेषण की क्रिया सुचारू रूप से नहीं हो पाती।

(2) जीव–जन्तुओं पर प्रभाव (Effects on Animals) - प्रदूषित जल में पाये जाने वाली वनस्पतियों के प्रदूषित हो जाने के कारण जल पारिस्थितिकी में उपस्थित सभी जीव–जन्तुओं पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। इनमें से कुछ प्रभाव निम्न हैं –

1. प्रदूषित जल में ऑक्सीजन की नितान्त कमी होती है जिससे जलीय जीव–जन्तु ऑक्सीजन के अभाव में मरने लगते हैं।

2. भयंकर रूप से प्रदूषित जल में ऐसे सभी जन्तु जिनके लिए स्वच्छ जल आवश्यक हैं, नष्ट हो जाते हैं। ऐसे जल में अनेक प्रकार के हानिकारक बैक्टीरिया एवं प्रोटोजोआ पाये जाते हैं।

3. औद्योगिक ईकाइयों से निस्तारित प्रदूषित जल के नदियों में विसर्जन के कारण शैवाल की वृद्धि हो जाती है जिससे श्वसन के लिए ऑक्सीजन की मॉग बढ़ जाती है और जलीय जीव–जन्तु, विशेष रूप से मछलियों पर सर्वाधिक कुप्रभाव पड़ता है।

4. मल–मूत्र एवं कृषि बहिःस्राव के जल में विसर्जन से सल्फेट, नाइट्रेट और फास्फोरस इत्यादि रासायनिक पदार्थों की मात्रा बढ़ जाती है जिससे समीपवर्ती नदियों, झीलों, तालाबों में विशेष प्रकार की वनस्पतियॉ पनपने लगती हैं। धीरे–धीरे जलाशय सूखने लगते हैं और उसमें पाये जाने वाले जीव–जन्तु समाप्त हो जाते हैं।

5. गहन कृषि के अन्तर्गत अधिकतम उत्पादन प्राप्त करने के लिए जो कृत्रिम खादें, दवाइयॉ, कीटनाशक, पेस्टीसाइड और जैविक खाद प्रयोग किए जाते हैं वह जल के माध्यम से जल राशियों में प्रवेश कर जाते हैं और भूमि एवं जलमण्डल में जीवों का पारिस्थितिक तंत्र को विकृत कर देते हैं, जल में O_2 की कमी कर देते हैं।

6. तैलीय प्रदूषण के कारण समुद्रों में पाये जाने वाले जलीय जीव–जन्तु विशेषकर मछलियॉ एवं जल पक्षी मुख्य रूप से प्रभावित होते हैं।

(ब) मनुष्यों पर प्रभाव (Effects on Human Beings) - प्रदूषित जल का प्रभाव न केवल जलीय जीव–जन्तुओं पर पड़ता है बल्कि मनुष्य भी इससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता है क्योंकि जल मानव

पर्यावरण का ही एक अंग है। मानव स्वास्थ्य पर प्रदूषित जल के प्रभाव का अध्ययन निम्नानुसार किया जा सकता है–

(1) पेयजल द्वारा (By drinking water) - जल कुछ विशेष प्रकार के रोगाणुओं का अच्छा वाहक होता है। प्रदूषित जल में नाना प्रकार के रोगाणु पाये जाते हैं जिसे पीने से अनेक प्रकार के रोग फैलते हैं जो निम्नलिखित हैं–

1. जीवाणु (Bacteria) - रोगजनक जीवाणु मनुष्यों में हैजा, टाइफाइड़ डायरिया एवं पेचिश रोग फैलाते हैं।

2. विषाणु (Virus) - विषाणुओं से पोलियों, यकृत शोथ, पीलिया इत्यादि रोग फैलते हैं।

3. प्रोटोजोआ (Protozoa) - इससे मनुष्यों में पेट तथा आंत सम्बन्धी रोग अतिसार, यकृत इत्यादि में फैलते हैं।

(2) जल के सम्पर्क द्वारा (By contact of water) - जल स्रोतों के प्रदूषित जल में अनेक प्रकार के सूक्ष्म जीवाणु तथा परजीवी पाये जाते हैं। ये परजीवी प्रदूषित जल में मनुष्यों एवं पशुओं के नहाने, धोने तथा कपड़ा साफ करने एवं अन्य कार्यों के लिए प्रयोग करते समय उनके चमड़े को छेदकर शरीर में पहुॅच जाते हैं जिससे अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

(3) जल में उपस्थित रासायनिक पदार्थों द्वारा (By chemical substances present in water) - प्रदूषित जल में उपस्थित रासायनिक पदार्थों द्वारा मनुष्यों के स्वास्थ्य पर निम्नलिखित प्रभाव पड़ते हैं

1. अधिक फेरस बाई–कार्बोनेट युक्त जल से बदहजमी की शिकायत होती है।

2. अधिक फ्लोराइड की मात्रा दॉतों को लाभ के स्थान पर हानि पहुॅचाती है।

3. जल में उपस्थित नाइट्रेट एवं नाइट्राइट की अधिकता हीमोग्लोबिन की ऑक्सीजन वहन क्षमता को कम कर देती है।

4. पेय जल में पारे की अधिकता से मनुष्यों में विकृतियॉ हो जाती हैं।

(स) अन्य प्रभाव (Other Effects) -

प्रदूषित जल के कारण होने वाले अन्य प्रभाव निम्नलिखित हैं–

1. प्रदूषित जल में अनेक प्रकार के सूक्ष्मजीव, जैसे–शैवाल इत्यादि उपस्थित होते हैं जिससे जल का रंग परिवर्तित हो जाता है जो पीने में अरूचिकर होता है।

2. रासायनिक उर्वरकों से जब जल का प्रदूषण होता है तो अत्यधिक जलकुम्भी तथा शैवाल की वृद्धि होती है जिससे जल स्रोत धीरे–धीरे नष्ट हो जाते हैं।

3. जल में अमोनिया एवं हाइड्रोजन सल्फाइड धुले होने के कारण उसमें अरूचिकर गन्ध एवं स्वाद उत्पन्न हो जाता है।

4. अम्ल प्रदूषित जल से धातु की पाइपों एवं बर्तनों का क्षरण होता है।

जल प्रदूषण नियन्त्रण के उपाय

(Control measures of water pollution)

जल को प्रदूषित होने से बचाना हमारा प्राथमिक ध्येय होना चाहिए क्योंकि जल अतिमहत्वपूर्ण पदार्थ है जिसके अभाव में मानव व वनस्पति–जगत जीवित नहीं रह सकता। जल को प्रदूषित होने से बचाने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं–

1. उद्योगों के रसायन एवं गन्दे अपशिष्ट युक्त जल को नदियों, सागरों, नहरों, झीलों आदि में उपचारित किए बिना न डाला जाए।

2. उद्योगों को ऐसा संयन्त्र लगाने को कहा जाए जिनसे वे प्रदूषित जल को उपचारित करके जलराशियों में प्रवाहित करें।

3. सीवर तथा मल–जल को नदियों आदि में सीधा न डाला जाए तथा शोधक संयत्रों की सहायता से गन्दे जल को एकत्रित कर व साफ करके खेतों की सिंचाई तथा अन्य उपयोगों में लाया जाए।

4. जल को स्वच्छ करते समय एक सीमित मात्रा एवं नियमित दवाओं का प्रयोग किया जाए तथा जल की शुद्धिकरण प्रक्रिया में ऐसा कोई तत्व या रसायन प्रयोग न किया जाए जिसका मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े।

5. मुर्दों को जलाने के लिए विद्युत शवदाह गृहों का निर्माण किया जाना चाहिए।

6. औद्योगिक अपशिष्टों के उपचार का इन्तजाम किया जाना चाहिए। ऐसा न करने वाली औद्योगिक इकाइयों पर वैधानिक नियमों का कड़ाई से पालन कराने की योजना होनी चाहिए।

7. जल प्रदूषण को रोकने के लिए सामान्य जनता में जागरूकता जगाई जानी चाहिए। सभी प्रकार के प्रचार माध्यमों द्वारा जल संरक्षण के उपायों का व्यापक प्रचार किया जाना चाहिए।

8. स्वच्छ जल के दुरूपयोग पर प्रतिबन्ध लगाया जाए।

9. जल में ऐसे जीव और वनस्पतियॉ विकसित की जाए, जो जल को शुद्ध करने में सहायक हों।

10. नदियों के जलग्रहण क्षेत्र में वृक्षारोपण को प्रोत्साहित करके भी जल प्रदूषण के प्रभाव को कम किया जा सकता है।

11. मल विसर्जन से उत्पन्न होने वाले प्रदूषण को रोकने के लिए सुलभ इण्टरनेशनल जैसी स्वयंसेवी संस्थाओं की मदद लेनी चाहिए। सुलभ शौचालयों का निर्माण करने से जल प्रदूषण की मात्रा में कमी लाई जा सकती है।

(3) समुद्री प्रदूषण के प्रभाव

(Effect of marine pollution)

वर्तमान में समुद्री प्रदूषण के कारण अनेक समुद्री जीव (पौधे एवं जन्तु) मृत्यु को प्राप्त हो रहे हैं तथा बहुमूल्य समुद्री सम्पदा की हानि हो रही है। समुद्री प्रदूषण के कुछ महत्वपूर्ण प्रभाव निम्नलिखित हैं–

1. नदियों के साथ आने वाले प्रदूषक समुद्री मछलियों और अन्य जीवों की मृत्यु का कारण बन रहे हैं।

2. औद्योगिक संस्थानों के बर्हिःस्राव से समुद्री जल प्रदूषित होकर मछलियों और अन्य जलीय जीवों को संदूषित कर रहे हैं, जिन्हें खाकर मानव अनेक बीमारियों से प्रभावित हो रहे हैं।

3. समुद्र में पेट्रोलियम तेल के रिसाव से भारी संख्या में व्हेल समेत अनेक जीवों, लाखों जल पक्षियों की मृत्यु हो जाती है।

4. समुद्री गहराई में उपस्थित रसायनों का उपयोग महत्वपूर्ण औषधियों के निर्माण में किया जा रहा है। प्रदूषण से उनकी गुणवत्ता प्रभावित हो रही है।

5. समुद्री प्रदूषण से मूँगे की बहुमूल्य चट्टानों की खेती लगातार कम होती जा रही है। जो राष्ट्र के लिए गहरी आर्थिक हानि का कारण बनी है।

6. परमाणु परीक्षणों के कारण अनेक महासागरों का जल तथा जीव रेडियोधर्मिता से प्रभावित हो गये हैं जो विभिन्न प्रकार के कैंसरों की उत्पत्ति का कारण बन गये हैं।

समुद्री प्रदूषण नियन्त्रण के उपाय

(Control measure of marine pollution)

समुद्री प्रदूषण के घातक प्रभावों को देखते हुए इस पर नियन्त्रण आवश्यक है। अतः इस प्रदूषण को

रोकने के लिए हमें निम्नलिखित महत्वपूर्ण कदम उठाने होंगे–

1. नदियों को कीटनाशकों, उर्वरकों, औद्योगिक बहिःस्रावों से मुक्त रखा जाए।

2. समुद्र के किनारे स्थापित उद्योगों, कारखानों नगरों के बहिःस्रावों को उपचारित करने के बाद ही समुद्र में डाला जाए।

3. समुद्रों के मालवाहक जहाजों और तेल कुओं से होने वाले गम्भीर तेल रिसाव पर रोक के कारगर तरीके ढूँढे जाए।

4. परमाणु परीक्षणों पर रोक लगाई जाए।

5. परमाणु कचरे को समुद्र में विकसित करने से पहले उसका उचित उपचार कर लिया जाए।

4. मृदा प्रदूषण के प्रभाव

(Effects of soil pollution)

मृदा प्रदूषण से जैव समुदाय पर दूरगामी प्रभाव पड़ते हैं प्रदूषण के कारण मृदा की उर्वरता में कमी आ जाती है तथा कृषि कार्य के लिए अनुपयुक्त होने लगती है। मृदा प्रदूषण के कारण मानव, पेड़–पौधों व सूक्ष्मजीवों पर पड़ने वाले प्रभाव निम्नलिखित हैं–

(1) मानव पर प्रभाव (Effect on human being) :- मृदा प्रदूषण के कारण मनुष्यों में स्वास्थ्य सम्बन्धी अनेकों समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। मृदा प्रदूषक खाद्य श्रृंखला के माध्यम से मानव शरीर में प्रवेश करने पर अनेक रोगों को जन्म देते हैं।

(I) ऑत सम्बन्धी रोग (Intestinal diseases) - विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों, जैसे–कच्ची सब्जियॉं, भूमिगत सब्जियॉं आदि का सेवन करने से अनेकों जीवाणु तथा विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मकृमि मानव शरीर में प्रवेश कर जाते हैं और यह शरीर में विभिन्न प्रकार की बीमारियों, जैसे–हैजा, टाइफाइड, अमिबियोसिस, डायरिया, आन्त्रशोध, पेचिश आदि को जन्म देते हैं।

(II) टिटनेस (Tetanus) - मिट्टी में उपस्थित मानवों एवं जन्तुओं के मलों के अंश टिटनेस बैसिलाई की उत्पत्ति के मुख्य स्रोत होते हैं, जो टिटनेस रोग को जन्म देते हैं।

(III) अन्य रोग (Other diseases) -मिट्टी में उपस्थित परजीवी कीड़ों के अण्डे व लार्वा, फफूंद, बीजाणु, टॉक्सिन, जैसे रासायनिक पदार्थ, डी.डी.टी., एल्ड्रीन तथा आर्सेनिक यौगिक आदि प्रदूषण मानव में भयंकर रोगों की उत्पत्ति का कारण बनते हैं, जिनमें पीलिया, गिल्टी बनना आदि रोग प्रमुख हैं।

(2) वनस्पति पर प्रभाव (Effects on vegetation) -मृदा प्रदूषण के कारण वनस्पतियॉं अत्यन्त प्रभावित होती हैं। प्रदूषण के कारण मिट्टी की उर्वरा शक्ति क्षीण हो जाती है, जिसके फलस्वरूप उसमें कोई भी वनस्पति नहीं उग पाती।

(3) अन्य जीव–जन्तुओं पर प्रभाव (Effects on other living- organisms) - अनेक रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग के कारण मिट्टी में पाये जाने वाले लाभकारी नाइट्रोजनीकारक जीवाणु, केंचुए आदि जीव नष्ट हो जाते हैं प्रदूषित मृदा से हानिकारक रसायन खाद्य श्रृंखला के द्वारा जानवरों में पहुँच जाते हैं जिससे उनके स्वास्थ्य पर गम्भीर प्रभाव पड़ता है।

(4) कृषि पर प्रभाव (Effects on agriculture) - मृदा प्रदूषण के कारण कृषि सर्वाधिक प्रभावित होती है। अनेक रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग के कारण मृदा प्रदूषण बढ़ता है जिसके कारण मृदा की उर्वरा शक्ति क्षीण हो जाती है एवं मृदा अपरदन के कारण पोषक तत्व घट जाने से कृषि उत्पादन घट जाता है। व्यापक सिंचाई तथा अधिक मात्रा में रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से भूमि में लवणता बढ़ती है तथा अनेक अवांछित खनिजों की अधिकता के कारण भूमि की उर्वरा शक्ति क्षीण हो जाती है।

मृदा प्रदूषण नियन्त्रण के उपाय

(Measures to control soil pollution)

(1) मृदा संरक्षण (Soil conservation) :- मृदा ह्रास को रोकने के लिए मृदा संरक्षण अत्यन्त आवश्यक है। मृदा संरक्षण हेतु व्यापक उपाय करने चाहिए। इन उपायों में वृक्षों की कटाई तथा अनियन्त्रित पशुचारण पर रोक, फसल चक्रीकरण, समुचित सिंचाई, बाढ़ नियन्त्रण आदि प्रमुख हैं।

(2) ठोस अपशिष्टों का निस्तारण (Disposal of solid wastes) - ठोस अपशिष्टों के निस्तारण हेतु निम्नलिखित उपाय सार्थक हो सकते हैं –

1. कूड़े–कचरें का विसर्जन मानव निवास स्थलों से दूर गर्तों में भरकर समतलीकरण के लिए करना चाहिए।

2. कूड़े–करकट का उपयोग विद्युत उत्पादन में किया जाना चाहिए।

3. कूडे–करकट को गड्ढों में एकत्र करके सड़ाकर जैविक खाद बनायी जा सकती है।

4. पुनर्चक्रण की प्रक्रिया द्वारा कुड़े–कचरे को पुनः उपयोग में भी लाया जा सकता है। इसमें कागज, कॉच के टुकड़े, लोहे के टुकड़ें, प्लास्टिक आदि स्वरूप बदलकर पुनः उपयोग में लाया जा सकता है।

5. भष्मीकरण की प्रक्रिया द्वारा भी अपशिष्टों का निस्तारण किया जाता है। इसमें अपशिष्टों को जलाकर समाप्त किया जाता है। परन्तु भष्मीकरण की विधि से वायु प्रदूषण की सम्भावना रहती है।

(3) फसलों पर जहरीले कीटनाशकों का छिड़काव विवेकपूर्ण ढंग से किया जाए।

(4) डी.डी.टी. का प्रयोग प्रतिबन्धित हो।

(5) सिंचाई और उर्वरकों का प्रयोग करने से पहले मिट्टी और पानी की जॉच करा लेनी चाहिए।

(6) रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर कम्पोस्ट तथा जैविक खाद के प्रयोग को वरीयता देनी चाहिए।

(7) खेतों में पानी के निकास की समुचित व्यवस्था की जानी चाहिए।

(8) खेतों के किनारे और ढालू भूमि पर वृक्षारोपण किया जाना चाहिए।

(9) रेडियोधर्मी पदार्थों से होने वाले भूमि प्रदूषण से बचने के लिए भूमिगत परमाणु परीक्षणों पर तुरन्त रोक लगाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास होने चाहिए। रेडियोधर्मी अपशिष्टों को जमीन में गड़ाने पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिए।

(10) प्लास्टिक थैलियों के उपयोग पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिए।

(11) उर्वरकों एवं कीटनाशकों/खपरतवारनाशकों का प्रयोग करने का प्रशिक्षण किसानों को टी.वी. समाचार–पत्र अथवा रेडियो के माध्यम से देना चाहिए।

भू–प्रदूषण को रोकना आज की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है, क्योंकि खाद्य पेय पदार्थ, कच्चे माल, आहार, जल एवं अन्य सभी प्रकार की सामग्रियॉ मृदा की गुणवत्ता पर निर्भर करती हैं।

(5) नाभिकीय अथवा रेडियोधर्मी प्रदूषण के प्रभाव

(Effects of nuclear or radioactive pollution)

नाभिकीय अथवा रेडियोधर्मी प्रदूषक अपने द्वारा उत्सर्जित विकिरणों द्वारा जैवमण्डल के प्रत्येक पक्ष (जैविक व अजैविक) पर अपना प्रभाव डालते हैं। जैसे–

(अ) मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव (Effects on Human Health) -

रेडियोधर्मी प्रदूषण से मानव स्वास्थ्य पर कई प्रत्यक्ष तथा दूरगामी प्रभाव पड़तें हैं। इससे मानव शरीर में रूधिर कणिकाओं **(Blood corpuscels)** की कमी, सिर के बालों का झड़ना, शरीर में रक्ताल्पता **(Anaemia),** ल्यूकीमिया, अस्थियों का कैंसर, आनुवांशिक तत्वों (जीन व गुणसूत्रों) की संरचना में परिवर्तन, स्त्रियों में बांझपन, भूख की कमी, उल्टी, शरीर का वजन कम होना तथा अल्सर जैसे घातक रोगों के होने का भय बना रहता है।

(ब) अन्य प्राणि जातियों पर प्रभाव (Effects on Other Animal Species) -

मानव के साथ–साथ नाभिकीय प्रदूषण अन्य प्राणि जातियों के स्वास्थ्य तथा उनके विभिन्न व्यवहारिक क्रिया–कलापों पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। नाभिकीय अवपात के फलस्वरूप विभिन्न खनिज तत्वों के रेडियोधर्मी समस्थानिक (पोटैशियम–40, आयोडीन–131, कैल्शियम–45 आदि) वनस्पतियों द्वारा खनिज अवशोषण के समय मृदा से अवशोषित कर लिए जाते हैं तथा यह पदार्थ खाद्य श्रृंखला के माध्यम से विभिन्न स्तर के जीवों के शरीर में पहुॅच कर कुप्रभाव डालते हैं।

(स) वनस्पतियों पर प्रभाव (Effects on Vegetations) -

नाभिकीय अथवा रेडियोधर्मी प्रदूषण का प्रभाव वनस्पतियों की प्रचुरता, कार्यिकी तथा गुणवत्ता पर पड़ता है। नाभिकीय विस्फोटों के फलस्वरूप इतनी अधिक मात्रा में ऊर्जा निकलती है जिससे 16 वर्ग कि.मी. तक के क्षेत्र की सम्पूर्ण वनस्पति जल जाती है। विभिन्न तत्वों के रेडियोधर्मी समस्थानिक उन तत्वों का स्थान पादपों के क्रियात्मक तन्त्रों में ले लेते हैं। जिससे पादपों की विभिन्न क्रियाएॅ, जैसे–रसारोहण, प्रकाश–संश्लेषण, श्वसन, पुष्पन तथा जनन व्याधित होती हैं।

नाभिकीय अथवा रेडियोधर्मी प्रदूषण नियन्त्रण के उपाय

(Control measures of nuclear or radioactive pollution)

नाभिकीय अथवा रेडियोधर्मी प्रदूषण का समूल नाश नहीं किया जा सकता है फिर भी निम्नलिखित उपायों का अनुसरण करके इसको नियन्त्रित किया जा सकता है–

1. परमाणु बमों के निर्माण तथा उपयोग पर प्रतिबन्ध लगाया जाए तथा विश्व में नाभिकीय भण्डारों को समाप्त किया जाए।

2. भूमिगत, वायुमण्डल तथा जलमण्डल में परमाणु बमों के परीक्षण पर प्रतिबन्ध लगाया जाए।

3.परमाणु बिजलीघरों से उत्पन्न कचरे को दफनाने का पूरा प्रबन्ध किया जाए, जिससे रेडियोधर्मी विकिरण न हो सके।

4. उच्चस्तरीय परमाणु अपशिष्टों के विसर्जन के लिए कांच के जालक बनाने का सुझाव दिया गया है।

5. रिएक्टरों के रख–रखाव में पूर्ण सतर्कता बरतनी चाहिए। समय–समय पर रिएक्टरों व परमाणु संयन्त्रों की टंकियों व पाइप लाइनों की जॉच करते रहना चाहिए।

6. रेडियोधर्मी तत्वों से युक्त युद्ध–सामग्री के निर्माण पर प्रतिबन्ध होना चाहिए तथा परमाण्विक युद्धों को समाप्त करने का प्रयास करना चाहिए।

7. परमाण्विक बिजलीघरों व रिएक्टरों की स्थापना नगरों व आबादी से दूर करनी चाहिए।

6. ध्वनि या शोर प्रदूषण के प्रभाव

(Effects of sound or noise pollution)

ध्वनि अथवा शोर प्रदूषण मानव–जीवन के साथ–साथ अन्य जीव–जन्तुओं तथा निर्जीव वस्तुओं को भी प्रभावित करता है। जैसे–

(1) मानव जीवन पर प्रभाव (Effects on human life) -शोर मानव जीवन को विविध रूपों में प्रभावित करता है। शोर जहॉ एक ओर मानव स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालता है वहीं दूसरी ओर उसकी कार्यक्षमता को भी घटाता है। शोर मानवीय क्रियाकलापों में मुख्यतः तीन प्रकार से बाधक होता है –

(I) ध्वनि श्रवण स्तर पर (At the level of audible sound) - शोर के कारण सर्वाधिक कष्ट कानों को उठाना पड़ता है। इससे श्रवण शक्ति प्रभावित होती है। यह साधारण–सी बात है कि कानों के निकट आकस्मिक बम बिस्फोट से हमें अधिक बहरापन प्रतीत होता है। प्रयोगों द्वारा यह पाया गया है कि शोरग्रस्त स्थानों में निरन्तर अधिक समय तक रहने से श्रवण शक्ति की आंशिक या पूर्ण क्षति हो जाती है।

(II) कार्यकीय स्तर पर (At the level of physiology) - शोर कानों के अतिरिक्त हृदय, तन्त्रिका तन्त्र तथा पाचन तन्त्र पर भी प्रभाव डालता है। तीव्र आकस्मिक ध्वनि से शरीर तन्त्र लगभग अनियन्त्रित सा हो जाता है। त्वचा का पीला पड़ना, ऑख की पुतलियों का प्रसार, आंखों का बन्द होना इसके कुछ बाहर दिखाई देने वाले प्रभाव हैं।

(III) आचरण के स्तर पर (At the level of behaviour) - शोर के कारण मनुष्य के आचरण पर पड़ने वाले प्रभाव इतने जटिल तथा बहुमुखी होते हैं कि इनका सही–सही निर्धारण करना भी कठिन होता है।

दैनिक जीवन में व्याप्त शोरगुल को सामाजिक तनावों, लड़ाई–झगड़ों, मानसिक अस्थिरता, कुण्ठा, पागलपन इत्यादि दोषों का कारण माना जाता है।

(2) जन्तुओं तथा वनस्पतियों पर प्रभाव (Effects on animals and vegetations) - शोर प्रदूषण का प्रभाव केवल मानव जीवन पर ही नहीं अपितु अन्य जन्तुओं पर भी पड़ता है। शोर के कारण पशु–पक्षी अपने आवास–स्थल छोड़कर अन्य स्थानों पर चले जाते हैं। अत्यधिक तीव्र ध्वनि तंरगों के कारण पक्षी अण्डा देना बन्द कर देते हैं तथा पालतू पशु भी दूध कम मात्रा में देते हैं। खनन विस्फोटकों की तीव्र ध्वनि के कारण आसपास के जंगलों के पशु पलायन कर जाते हैं।

(3) निर्जीव वस्तुओं पर प्रभाव (Effects on non-living things) - ध्वनि प्रदूषण का प्रभाव केवल जीवों पर ही नहीं अपितु निर्जीव वस्तुओं पर भी व्यापक रूप से पड़ता है। तीव्र ध्वनि तरंगों के कारण भवनों की छतें हिल जाती हैं, खिड़की, दरवाजों के शीशे टूट जाते हैं तथा दीवारों में दरार पड़ जाती हैं।

ध्वनि या शोर प्रदूषण नियन्त्रण के उपाय

(Control measure of sound or noise pollution)

शोर का निश्चित निवारण एक अत्यन्त जटिल समस्या है, क्योंकि इसके निवारण में हमें आधुनिक प्रगति के फलस्वरूप प्राप्त सुख–सुविधाओं का त्याग या उनकी संख्या में व्यापक कमी के साथ ही यह भी ध्यान रखना है कि नियन्त्रण की प्रक्रिया से औद्योगिक उपलब्धि भी प्रभावित न हो। इस प्रकार शोर का समूल निवारण तो

असम्भव है, परन्तु कुछ कारगर उपाय अपनाकर इसका नियन्त्रण अवश्य किया जा सकता है।

तकनीकी तथा सैद्धान्तिक दृष्टि से शोर समस्या के मूल में निम्नलिखित तीन वस्तुऍं होती हैं–

(1) शोर का स्रोत (2) शोर का पथ, एवं (3) ग्राही अंग।

अतः शोर नियन्त्रण के सभी प्रयासों में इन तीनों का ध्यान रखते हुए आवश्यकतानुसार कदम उठाना कारगर हो सकता है। शोर प्रदूषण को नियन्त्रित करने के कुछ उपाय निम्नलिखित हैं–

1. शोर को उसके उद्‌गम स्थान पर ही रोकना सबसे सीधा सरल उपाय है। यद्यपि शोर के स्रोतों की संख्या घटाना व्यावहारिक नहीं है फिर भी कानून की सहायता से अधिक शोर उत्पन्न करने वाली पुरानी –खटारा मोटरगाड़ियों, ट्रकों, मोटर साइकिल इत्यादि का शहर के मुख्य मार्गों तथा आवासीय क्षेत्रों से निकलने पर रोक लगाकर इस दिशा में अपेक्षित परिणाम पाए जा सकते हैं।

2. मोटर वाहनों में बहुध्वनि वाले हॉर्न बजाने पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिए।

3. कल–कारखानों को शहर से दूर स्थानों पर स्थापित करना चाहिए।

4. उद्योगों द्वारा उत्पन्न शोर को कम करने के लिए विभिन्न तकनीकी व्यवस्थाओं का उपयोग किया जाना चाहिए। जैसे कारखानों में शोर शोषक दीवारों तथा मशीनों के चारों ओर मफलरों का कवच लगाकर शोर का स्तर 90 डेसीबल तक कम किया जा सकता है।

5. उद्योगों में मशीनों के सही रख–रखाव से शोर कम किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त शोर शोषक पदार्थ जैसे लकड़ी, ऊन इत्यादि का आवश्यकतानुसार उपयोग कर शोर को घटाया जा सकता है।

6. अत्यधिक शोर वाले कल–कारखानों में 'पाली' **(Shifts)** की व्यवस्था होनी चाहिए।

7. रेलों द्वारा उत्पन्न शोर को बैलास्ट विहीन**(Ballast less)** रेल पथों के निर्माण द्वारा कम किया जा सकता है।

8. विमानों को विशेष ढाल पर उतारा तथा चढ़ाया जाता है जिससे कम से कम शोर हो।

9. आजकल जेट यानों के शोर को कम करने के लिए उनके टर्बोजेट इंजनों के निर्गम पर शोर अवशोषक का प्रयोग किया जाता है।

7. पालीथिन प्रयोग के दुष्प्रभाव

(Bad Effects of Using Polythene)

पालीथिन का प्रचलन हमारे देश में दिनों दिन बढ़ता जा रहा है। पालीथिन बनाने में जिस रसायन का प्रयोग किया जाता है वह स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त हानिकारक है। पालीथिन न ही गलती है और न ही सड़ती है। इसके दुष्प्रभाव निम्न हैं –

1. पालीथिन को उपयोग के बाद जगह–जगह फेकने से यह नालियों एवं सीवरों में चला जाता है जिससे नालियों एवं सीवरों में जाम की स्थिति बन जाती है और इनको साफ करना दुष्कर हो जाता है।

2. मवेशी इन पालीथिनों को घास के साथ खा जाते हैं। उनके पेट में पालीथिन एकत्र होकर अनेक बीमारियों को जन्म देती है यहॉं तक कि उनकी मृत्यु तक हो जाती है।

3. पालीथिन के कारण पेड़–पौधों के भोजन ग्रहण करने का मार्ग अवरूद्ध हो जाता है जिससे पेड़–पौधे भोजन, पानी समुचित रूप से प्राप्त नहीं कर पाते हैं।

पालीथिन प्रयोग के दुष्प्रभाव का नियन्त्रण –

1. पालीथिन निर्माण निर्धारित मानक के अनुसार उच्च स्तर के प्लास्टिक से होना चाहिए क्योंकि जो पालीथिन निर्धारित मानक के अनुसार तैयार की जाती है वह गल सकती हैं और मिट्टी में भी मिल सकती है। इसको गलाकर इसका पुनः उपयोग भी कर सकते हैं।
2. मानक से निम्न स्तर के पालीथिन के प्रयोग पर शासन स्तर से पूर्ण प्रतिबंध लगाना चाहिए।
3. नैतिक रूप से मनुष्यों को भी चाहिए कि पालीथिन का प्रयोग नहीं करें।

8. सिन्थेटिक दूध के दुष्प्रभाव

(Bad Effects of Synthetic Milk)

सिन्थेटिक दूध सामान्यतया यूरिया, घटियां रिफाइन्ड तेल, कास्टिक सोडा, चीनी या ग्लूकोज, घटिया डिटर्जेंट पावडर, सोयाबीन का तेल, वसा रहित दूध, अमोनियम सल्फेट, डी.डी.टी. चर्बी इत्यादि मिलाकर तैयार किया जाता है। इसके प्रयोग से निम्न खतरे हैं–

1. किसी भी व्यक्ति को कैंसर जैसी लाइलाज बीमारी हो सकती हैं

2. ऑखों की रोशनी में कमी, मांसपेशियों में सूजन, हृदय रोग, जिगर, गुर्दे एवं फेफड़ों को नुकसान पहुॅचाकर मौत दे सकती हैं।

3. नवजात शिशुओं में विकलांगता ला सकती है।

सिथेंटिक दूध के दुष्प्रभावों का प्रबन्धन –

इसके प्रबन्ध के उपाय निम्न हैं –

1. वैज्ञानिकों ने सिंथेटिक दूध की पहचान करने के लिए एक किट विकसित की है जिससे इस दूध की पहचान की जा सकती है।

2. इसके कारोबार पर प्रभावी रूप से प्रतिबंध लगाना चाहिए।

3. नैतिकता के आधार पर भी लोगों को इसके कारोबार से बचना चाहिए।

गाय तथा भैसों को आक्सीटोसिन इंजेक्शन लगाकर दूध की पूरी मात्रा प्राप्त करते हैं कुछ समय बाद थनों से खून, मांस के टुकड़े इत्यादि आना शुरू हो जाते हैं। गाय तथा भैंस बॉझ हो जाती है। इस दूध के सेवन से मानव शरीर पर निम्न दुष्प्रभाव होते हैं–

1. बच्चों की ऑखों की रोशनी कम अथवा सदा के लिए जा सकती है।

2. लड़कियों के शरीर में हार्मोन्स का संतुलन बिगड़ जाता है और असामान्य बदलाव शुरू हो जाते हैं। अत्यधिक गम्भीर स्थिति में लड़कियों में मां बनने की सम्भावना खत्म हो जाती है।

आक्सीटोसीन इन्जेक्शन पर प्रतिबंध है लेकिन फिर भी मेडिकल स्टोरों में धड़ल्ले से बिक रहे हैं। अतः इनके प्रयोग पर कठोरतम सजा का प्रावधान कर व्यवहार में लागू किया जाना चाहिए।

पर्यावरण प्रबन्धन के प्रमुख पहलू

(1) इथिकल (नैतिक)

(Ethical)

मानव जिस स्थान पर निवासरत है इसके चारों तरफ एक आवरण है, जिसे पर्यावरण कहते हैं यह अजैविक, जैविक, आर्थिक, सांस्कृतिक, तकनीकी, सामाजिक प्रकार का होता है। आवरण (कवच) उसमें रहने वाले मानव का सम्पूर्ण विकास करता है। इसका सामान्य अर्थ है कि आवरण मनुष्य की सबसे प्रिय वस्तु होनी चाहिए इस कारण हमें चारों ओर उपस्थित आवरण के प्रति पूर्ण समर्पित रहना चाहिए अर्थात इसका संरक्षण करना चाहिए। यही हमारा नैतिक दायित्व है और इसी में हम सभी का हित हुआ है क्योंकि यही हमारा चहुँमुखी विकास करेगा।

जब पर्यावरण के प्रति लगाव हो तो इसके लिए हमें अपना आंतरिक विकास करना होगा। हमारी प्रवृत्तियों में परिवर्तन लाना होगा। यदि हम किसी समस्या के समाधान में सक्रिय नहीं हैं तो अप्रत्यक्ष रूप से समस्या को बढ़ाने में हम जिम्मेदार हैं। पर्यावरण का संरक्षण करने उसके प्रदूषण को रोकने हेतु हमारे अनेक नैतिक कर्तव्य हैं जिसमें से प्रमुख निम्न हैं –

1. पानी बचाइए – जल ही जीवन है। पानी का दुरूपयोग वर्तमान में बहुत अधिक हो रहा है। भविष्य को सुरक्षित रखने के लिए पानी का बचत करना अत्यन्त आवश्यक है इसके लिए कपड़े धोने में उपयोग में लाये गये पानी को कूलर, फर्श आदि धोने में पुनः उपयोग में लाना चाहिए। कभी भी नल को खुला नहीं रहने दें। कहीं भी नल को खुला देखने पर उसे तुरन्त बंद कर दें। पाइप लाइन में यदि रिसाव हो या कोई पाइप लाइन को क्षति पहुँचा रहा है तो तुरन्त सम्बन्धित विभाग को सूचित करना चाहिए। अनावश्यक टयूबवेल नहीं खुदवाना चाहिए। इससे पृथ्वी के अन्दर के जल स्त्रोतों में कमी आ रही है।

2. बिजली बचाइए– बिजली वर्तमान में मानव के विलासिता का प्रमुख अंग हो गया है इसके अभाव में मानव का जीवन कष्टप्रद हो जाता है अतः इसके बचत के लिए बल्ब, कूलर पंखे इत्यादि को खुले नहीं छोड़े। सूर्य के प्रकाश में अधिक से अधिक कार्य करने का आदत बनाये। बल्ब की जगह ट्यूबलाइट का उपयोग करें। मकान के पास वृक्ष लगाने से कूलर की आवश्यकता कम महसूस होगी। यदि आपको कहीं बिजली चोरी नजर आती है तो उसकी सूचना तुरंत सम्बन्धित विभाग को देनी चाहिए। उत्सवों, शादियों, धार्मिक कार्यों में भी बहुत अधिक प्रकाश व्यवस्था पर नियन्त्रण करना चाहिए।

3. कागज बचाइए– कागज वृक्षों की लकड़ियों से बनता है। कागज के बचत से वृक्षों का संरक्षण हो सकता है। रफ कार्य हेतु घर में उपलब्ध डाक, निमन्त्रण पत्र, बालकों की पिछली कक्षा की कापियों से बचे खाली पन्नों को उपयोग में लाना चाहिए। बेकार कागज को रद्दी में बेच दे जिससे उसका उपयोग पुनः हो सके।

4. साबुन – नहाने, कपड़े धोने के साबुन में कास्टिक सोडा एवं फास्फोरस की मात्रा अधिक होता है जो पानी के साथ बहकर नदी, तालाब को प्रदूषित कर देता है। अतः कम फास्फोरस के साबुन का प्रयोग करें।

साबुन का प्रयोग नहाने में भी प्रतिदिन नहीं करे। डिटर्जेंट का प्रयोग भी कम करना चाहिए।

5. प्लास्टिक – वर्तमान में हम पालीथिन एवं प्लास्टिक पर आश्रित हो गये हैं जिसे एक बार प्रयोग करके फेंक देते हैं। यह प्लास्टिक अविघटनशील पदार्थ है। यह अपने अन्दर जहरीले तत्वों को समाहित किये रहता है जिसके कारण मृदा प्रदूषित होता है। अतः प्लास्टिक या पालीथिन के स्थान पर कागज, कॉच, मिट्टी व धातु से बनी वस्तुओं का प्रयोग करें एवं प्लास्टिक के बेकार चीजों को एकत्र करके कबाड़ी को बेच दे ताकि उनका पुनर्चक्रण किया जाकर पुनः उपयोग किया जा सके।

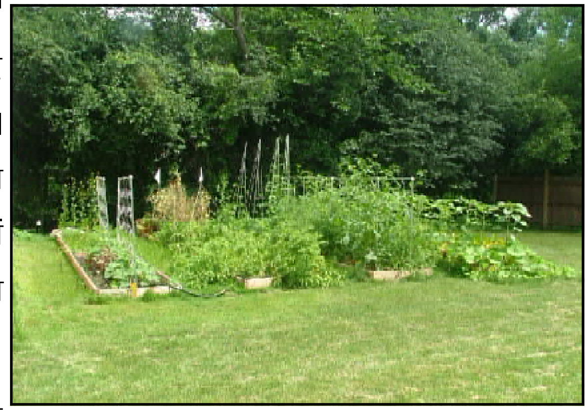

6. बगीचा लगाइए –पेड़ हमारे स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है पेड़ हमें शुद्ध वायु प्रदान करता है। पेड़ों से हम अपने जीवन की अधिकांश आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। इनसे ध्वनि, वायु, जल, आणविक प्रदूषण एवं मिट्टी क्षरण नियन्त्रित होता है। घर के पास पेड़–पौधे लगाकर एक बगीचा विकसित करना चाहिए।

7. धूम्रपान निषेध–धूम्रपान नहीं करके अपने जीवन की रक्षा कीजिए साथ ही आपके आस–पास रहने वाले लोगों की भी जो धूम्रपान नहीं करते हैं।

8. कागज–पत्ते आदि नहीं जलायें –व्यर्थ कागज, पत्ते आदि जलाने के बजाए उन्हें मिट्टी में गाड़ देना चाहिए जिससे वह खाद बनकर मिट्टी की उपजाऊ शक्ति बढ़ा सकता है। न सड़ने–गलने वाली वस्तुओं को मिट्टी में नहीं दबायें।

9. वाहन प्रदूषण से बचे–बाहनो से निकले धुएं में हानिकारक गैसे जैसे कार्बन डाइआक्साइड, कार्बन मोनो आक्साइड, लेड आक्साइड, सल्फर डाई आक्साइड इत्यादि होती है। इसके बचाव के लिए वाहनों की नियमित सर्विसिंग करवाइए। मानक से ज्यादा धुऍं को नियन्त्रित करें। चौराहों पर लाल बत्ती के समय अपना वाहन बंद कर दे। वाहनों का प्रयोग कम से कम करे। अधिक से अधिक पैदल अथवा साइकिल का प्रयोग करें।

10. ध्वनि प्रदूषण से बचे–वाहनों में मानक से ज्यादा ध्वनि स्तर वाले हार्न का प्रयोग नहीं करें। मेले में, उत्सवों में अधिक शोर उत्पन्न करने वाले यन्त्रों को नियन्त्रित करे। 125 डेसिबिल से अधिक शोर उत्पन्न करने वाले अग्नि पटाखों का प्रयोग नहीं करें। मोटर गाडियों, वायुयानों, फैक्टिरियों में उच्च शक्ति के ध्वनि अवरोध यन्त्र लगाने चाहिए।

11. जैविक कीटनाशकों का प्रयोग–किसानों को रासायनिक कीटनाशकों के स्थान पर जैविक कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए जिससे नाशक जीव ही मरे अन्य जीवों पर कोई दूष्प्रभाव नहीं हो।

12. जैविक खाद का प्रयोग–रासायनिक खाद के स्थान पर जैविक खाद का प्रयोग करना चाहिए।

रासायनिक खाद के प्रयोग से मिट्टी के पोषक तत्व समाप्त हो जाते हैं।

13. वन विनाश रोकें–पेड़–पौधों को नहीं काटना चाहिए साथ ही यदि कोई काटता है तो रोकने का प्रयास करना चाहिए। वन विनाश से वन्य जीवों का आवास स्थान प्रभावित होता है व भूमि का अपरदन होता है अतः संसाधनों का उपयोग संतुलित करना चाहिए।

हमें प्राचीन समय के अनुसार पर्यावरण के प्रति आदर भाव रखना चाहिए जिससे हम पर्यावरण के महत्व को अनुभव कर सकें। प्राचीन काल में दिन का प्रारम्भ सूर्य आराधना से शुरू होता था जो विश्व में जीवन का आधार है। देश में नदियों को माता तथा नव निर्माण से पूर्व धर्मशास्त्रों के अनुसार शुभ मुहुर्त में भूमि पूजन किया जाता था। पीपल, ऑवला, तुलसी की पूजा की जाती थी। महत्वपूर्ण गुणों वाले पौधों को धर्म से जोड़ा गया है। इसी प्रकार जीव–जन्तुओं को भी महत्व दिया गया है। गणेश का वाहन चूहा है, शिव का वाहन बैल, दुर्गा का वाहन सिंह है व सरस्वती का वाहन हंस है आदि।

उपर्युक्त बिन्दुओं को विचार करके इन सभी को यथा समय पालन हेतु अपने को मानसिक रूप से तैयार करके क्रियान्वित करना चाहिए। याद रखिये–पर्यावरण हमारी अमूल्य सम्पदा है इसकी सुरक्षा करना हमारा कर्तव्य है। पर्यावरण सुरक्षा ही जन सुरक्षा है।

(2) आर्थिक

(Economic)

मनुष्य अपने वातावारण की उपज है। वातावरण का अर्थ मानव जीवन के चारों ओर फैली हुई भौगोलिक, सामाजिक , राजनीतिक, आर्थिक, और सांस्कृतिक परिस्थितियों से है जिनमें रहकर वह अपना जीवनयापन करता है। आर्थिक वातावरण में धनोपार्जन एवं उसके उपयोग सम्बन्धी गतिविधियॉ आती हैं।

आर्थिक पर्यावरण का अर्थ मनुष्य के चारों ओर उन प्राकृतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों से है जो मानव की आर्थिक क्रियाओं को प्रभावित करती है। इनमें वे सभी तत्व सम्मिलित हैं। जो परोक्ष अथवा प्रत्यक्ष रूप से मानव के आर्थिक जीवन को प्रभावित करते हैं। मानव के आर्थिक विकास द्वारा जीवन स्तर ऊंचा उठ सके इस हेतु यहॉ आर्थिक पर्यावरण के ऐसे लक्ष्यों, उद्देश्यों एवं उसके घटकों के बारे में विचार करेंगे जिससे अन्य लक्ष्यों पर विपरीत प्रभाव नहीं पड़े।

पर्यावरणीय प्रबन्धन के आर्थिक पक्ष की विशेषताऍ

1. आर्थिक क्रियाऍ–इसके अन्तर्गत व्यक्ति द्वारा आय अर्जित करने एवं कुशलतापूर्वक व्यय करने सम्बन्धी क्रियाऍ जैसे कृषि, उद्योग, व्यापार–वाणिज्य, परिवहन, सुधार, बीमा, बैंकिंग, सरकारी आय–व्यय इत्यादि सम्मिलित हैं अर्थात् इनमें सभी आर्थिक क्रियाओं जैसे उपभोग, उत्पादन, विनिमय, वितरण एवं राजस्व को शामिल किया जाता है।

2. गैर–आर्थिक पर्यावरण का प्रभाव–आर्थिक पर्यावरण, भौगोलिक पर्यावरण (स्थिति, धरातल की बनावट, मिट्टी, पानी, खनिज, वन, शक्ति के साधन, जलवायु आदि) सामाजिक पर्यावरण (सामाजिक रीतिरिवाज,

शिक्षा, स्वास्थ्य आदि) एवं राजनीतिक पर्यावरण (शासन प्रणाली, आर्थिक व्यवस्था आदि) से प्रभावित होता है।

3. सरकार द्वारा नियंत्रण एवं मार्गदर्शन –आर्थिक पर्यावरण सरकार के मार्गदर्शन एवं नियंत्रण में चलता है। पूंजीवादी व्यवस्था में सरकार न्यूनतम हस्तक्षेप की नीति अपनाती है। जबकि समाजवादी अर्थव्यवस्था में सरकार स्वयं आर्थिक क्रियाओं का संचालन करती है।

4. आधारभूत सुविधाएं –आर्थिक पर्यावरण पर आधारभूत सुविधाओं जैसे–बिजली, पानी, शक्ति, परिवहन, संचार, बैंकिंग व बीमा व्यवस्था आदि का प्रभाव पड़ता है। इन सुविधाओं के उपलब्ध होने पर आर्थिक विकास तेजी से होता है।

5. जनता का नजरिया –यदि जनता का दृष्टिकोण भौतिकवादी है तो आर्थिक वातावरण में किसी भी प्रकार नैतिक अनैतिक तरीके से धन कमाने की भावना विकसित होगी। यदि जनता का अध्यात्मिक दृष्टिकोण है तो मनुष्य केवल नैतिक तरीके से ही धन कमायेगा, जिससे आर्थिक समानता आयेगी।

6. समाज में धन सम्पत्ति का वितरण –समाज में धन का असमान वितरण होने एवं आर्थिक सत्ता का केन्द्रीकरण होने से आर्थिक असमानता एवं शोषण को बढ़ावा मिलता है एवं समाज कुंठित हो जाता है। चोरी, रिश्वतखोरी व भ्रष्टाचार बढ़ता है।

7. धन की पर्याप्त उपलब्धता –पर्याप्त मात्रा में धन उपलब्ध होने पर प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों का पूर्ण उपयोग होगा, जिससे देश में आय, रोजगार, विनियोग व आर्थिक विकास बढ़ेगा।

8. आर्थिक विचार धारा –आर्थिक वातावरण को आर्थिक विचारधाराएं (पूॅजीवादी, समाजवादी, साम्यवादी, मिश्रित एवं गांधीवादी) भी प्रभावित करती हैं । अमेरिका में पूॅजीवादी विचारधारा के कारण निजी लाभ, निजी सम्पत्ति, प्रतिस्पर्द्धा, अति उत्पादन, स्वतः प्रेरणा, अनुसंधान आदि को बढ़ावा मिला है।

9. नियोजित अर्थव्यवथा –इस अर्थव्यवस्था में समस्त साधनों पर राज्य का अधिकार होता है। उपलब्ध साधनों का प्राथमिकता के आधार पर नियोजित उपयोग होता है। हर प्रक्रिया में सामाजिक हित का ध्यान रखा जाता है। भारत में मिश्रित अर्थव्यवस्था होने से सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र दोनों साथ–साथ आर्थिक क्रियाएॅ कर रहे हैं।

10. नैतिक स्तर–जनता का नैतिकता भी आर्थिक प्रबन्धन को प्रभावित करती है। नैतिक स्तर गिरा हुआ है तो देश के आर्थिक विकास पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

पर्यावरणीय प्रबन्धन के आर्थिक पक्ष के उद्देश्य

1. अर्थव्यवस्था का सफल संचालन एवं विकास –इसके लिये आर्थिक परिवेश का सम्पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है।

2. नूतन संसाधनों एवं अवसरों की तलाश – इससे विकास के नये क्षेत्रों एवं संसाधनों का पता लगाया जा सकता है।

3. परिवर्तनों की जानकारी – आर्थिक परिवेश की परिवर्तनशीलता की जानकारी से आर्थिक विकास

में आने वाले बाधक तथ्यों एवं चुनौतियों का पता लगाकर उन्हें हटाया जा सकता है।

4. समायोजन – अर्थव्यवस्था को नियंत्रित करने वाली पर्यावरणीय प्रकृति, तत्वों एवं विशेषताओं का अध्ययन करने से अर्थव्यवस्था को उनके साथ समायोजित किया जा सकता हैं

5. आर्थिक विकास हेतु दबाव – पर्यावरण को आर्थिक विकास के अनुरूप बनाने के लिये दबाव डालना ताकि देश के आर्थिक विकास के लिये परिवेश का अधिकाधिक उपयोग किया जा सके। आर्थिक पर्यावरण सदैव स्थिर नहीं रहता है, जिससे आर्थिक विकास की प्रक्रिया निरन्तर जारी रहती है। आर्थिक समृद्धि एवं विकास पर्यावरण पर निर्भर करता है। अनुकूल प्राकृतिक एवं सामाजिक परिवेश से देश का आर्थिक विकास,समृद्धि एवं पूर्ण रोजगार का रास्ता खुलता है। प्रतिकूल परिवेश से देश को गरीबी, बेकारी, भुखमरी जैसी स्थितियों से सामना करना पड़ता है।

पर्यावरणीय प्रबन्धन के आर्थिक पक्ष को निम्नांकित तत्व (अंग) प्रभावित करते हैं –

1. प्राकृतिक संसाधन – देश के प्राकृतिक संसाधन जैसे –भूमि, खनिज सम्पदा, जल, वनस्पति, वायु वर्षा आदि आर्थिंक पर्यावरण को प्रभावित करते हैं। प्राकृतिक संसाधनों की प्रचुरता एवं उनके समुचित दोहन से आर्थिक समृद्धि, विकास एवं रोजगार में वृद्धि होती है। संसाधनों के अभाव में गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी एवं पिछड़ापन की स्थिति पैदा होती है। प्राकृतिक संसाधनों के द्वारा ही आज अमेरिका, पश्चिमी यूरोपीय देश, अरब राष्ट्र विकसित राष्ट्र कहलाते हैं।

2. मानवीय संसाधन –मानव उत्पादन के प्रमुख साधन के साथ उत्पादन का उपभोक्ता भी है। देश में तीव्र आर्थिक विकास के लिये मानव शक्ति का स्वस्थ्य, बुद्धिमान, कुशल एवं प्रशिक्षित होना आवश्यक है। मानव शक्ति की उपलब्धता एवं उसके कुशल उपयोग से देश में तकनीकी विकास, उत्पादन की मात्रा में वृद्धि होती है। जन शक्ति उचित मात्रा में (अनुकूलतम जनसंख्या) होनी चाहिए।

3. सामाजिक एवं सांस्कृतिक संस्थाएॅं –परम्परागत रीति–रिवाज, सामाजिक व्यवस्थाएॅं, धार्मिक अंधविश्वास, रूढ़िवादी परम्पराएं एवं नैतिक मूल्य आर्थिक विकास में बाधक होते है। आलस्य, भाग्यवादिता, अंधविश्वास आदि से आर्थिक पर्यावरण दूषित होता है। भारत में रूढ़िवादिता, अंधविश्वास, भाग्यवादिता आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न की है।

4. वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास –नये–नये वैज्ञानिक आविष्कारों एवं तकनीकी विकास से कृषि, उद्योग आदि का तीव्र विकास होता है। नई–नई उत्पादन विधियों से देश के उत्पादन में वृद्धि, लागत में कमी, नई–नई वस्तुओं का उत्पादन, नवीन कच्चे माल की खोज, नये बाजारों की खोज होती है। इससे देश का आर्थिंक विकास होता है।

धान रोपाई यंत्र

5. आर्थिक प्रणाली का स्वरूप –पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली में निजी लाभ, स्वतः प्रेरणा, कुशल प्रबन्ध एवं शीघ्र निर्णय के कारण तेजी से विकास होता है। इसमें आर्थिक शोषण, आर्थिक सत्ता का केन्द्रीकरण, व्यापार चक्र, भ्रष्टाचार आदि को बढ़ावा मिलता है। समाजवादी आर्थिक प्रणाली में आर्थिक नियोजन, समाजिक स्वामित्व, कुशल प्रबन्ध से अधिकतम सामाजिक कल्याण होता है। इस व्यवस्था में अकुशलता, भ्रष्टाचार, कठोरता, कुप्रबन्ध व अधिनायकवादी प्रवृत्तियों को जन्म मिलता है।। मिश्रित आर्थिक प्रणाली में दोनों प्रणालियों के दोषों को दूर कर निजी एवं सार्वजनिक स्वामित्व, निजी लाभ पर सामाजिक हित में नियंत्रण, विकेन्द्रीयकरण आदि द्वारा तीव्र आर्थिक विकास का प्रयास रहता है। भारत में मिश्रित आर्थिक प्रणाली लागू है।

6. शासन प्रणाली –साम्यवादी शासन व्यवस्थाओं में उत्पादन के साधनों पर सामूहिक स्वामित्व तथा केन्द्रीय नियोजन द्वारा तीव्र आर्थिक विकास एवं अधिकतम सामाजिक कल्याण करने का प्रयास होता है। किन्तु व्यक्तिगत स्वतंत्रता, निजी साहस व शांति समाप्त होने की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। राजनीतिक स्थिरता अर्थव्यवस्था के विकास में सहयोगी होती है।

7. बाजार की स्थितियॉं –पूर्ण प्रतियोगिता के बाजार में अति उत्पादन, कम लागत, प्रतिस्पर्धा, सामान्य लाभ होने से साधनों का अनुकूलतम उपयोग होता है। एकाधिकार बाजार में कम उत्पादन, उंची लागत, ऊंची कीमत, एकाधिकारी लाभ व उपभोक्ताओं का शोषण होने से विकास में बाधा आती है। अपूर्ण प्रतियोगिता बाजार में विविधतापूर्ण उत्पादन के साथ अधिक लाभ तथा कम उत्पादन के साथ विज्ञापन लागतों से गलाकाट प्रतिस्पर्धा को जन्म मिलता है।

8. पूॅंजी एवं मुद्रा बाजार –पूॅंजी के अभाव में प्राकृतिक व मानवीय संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग नहीं होता व योजनाऍं लागू करने में कठिनाई आती है। पूॅंजी एवं मुद्रा बाजार कृषि, उद्योग व्यवसाय आदि को वित्त प्रदान कर देश के तीव्र आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त करते हैं और विदेशी पूॅंजी पर निर्भरता में कमी आती है। बैकिंग व बीमा कम्पनियॉं एवं अन्य वित्तीय संस्थाएं विभिन्न प्रकार के वित्त प्रदान कर आर्थिक विकास में सहयोग देती हैं।

9. सरकार की आर्थिक नीतियॉं –सरकार की उपयुक्त, प्रगतिशील एवं सुदृढ़ आर्थिक नीतियॉं जैसे –कृषि नीति, मौद्रिक नीति, श्रमनीति, मूल्य नीति, रोजगार नीति आदि कृषि उद्योग एवं व्यापार के विकास में सहायक होती हैं और देश का तीव्र विकास होता है।

10. मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियॉं –मौद्रिक नीति देश में मुद्रा व साख की मात्रा को नियंत्रित करती हैं मन्दीकाल मे मुद्रा व साख की मात्रा बढ़ाकर आर्थिक विकास को गति दी जाती है। जबकि तेजी काल में मुद्रा व साख की मात्रा में कमी द्वारा मुद्रास्फिति को नियंत्रित कर आर्थिक स्थिरता प्रदान की जाती है।

राजकोषीय नीति द्वारा सरकार विभिन्न करों द्वारा आय जुटाती हैं इस आय को विकास कार्यों पर व्यय किया जाता है। सार्वजनिक ऋणों की व्यवस्था एवं हितार्थ प्रबंधन इसके भाग हैं सरकार की कर नीति, व्यय नीति, सार्वजनिक ऋण नीति आर्थिक पर्यावरण को प्रभावित करती हैं।

11. श्रम सम्बन्धी परिस्थितियां एवं श्रम सन्न्यिम –आर्थिक पर्यावरण में श्रम सम्बन्धी दशाओं, परिस्थितियों एवं श्रम सन्नियमों का विशेष महत्व है। जहां एक ओर पर्याप्त व कुशल श्रम शक्ति, श्रम विभाजन,

मधुर औद्योगिक सम्बन्ध, अच्छी कार्यदशाएं तीव्र आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त करती हैं, वहीं दूसरी ओर श्रम का अभाव, अकुशलता प्राकृतिक साधनों के विदोहन में रूकावट, उत्पादन में कमी करती हैं श्रमिकों के शोषण से औद्योगिक अशांति उत्पन्न होती हैं और आर्थिक विकास में बाधा पहुॅचाती है।

12. अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियॉ—विदेशी सहायता, विदेश नीति, व्यापार व भुगतान संतुलन, विनिमय दर आदि देश के आर्थिक पर्यावरण को प्रभावित करते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय संधियों, द्विपक्षीय समझौतो, अन्तर्राष्ट्रीय समझौता, विदेशी व्यापार की नीतियों, प्रतिनिधी मंडलों के आवागमन एवं आपसी संबंधों द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक वातावरण का निर्माण होता है। मधुर अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों से आर्थिक एवं तकनीकी सहयोग बढ़ता है।

13. परिवहन एवं संचार व्यवस्था—अर्थव्यवस्था का विकास उन्नत एवं आधुनिक परिवहन एवं संचार सुविधाओं पर निर्भर करता है। परिवहन के साधनों में रेल, सड़क, वायु एवं जल प्रमुख है। संचार सांधनों में डाक, तार, टेलीफोन एवं इलेक्ट्रॉनिक संचार उपकरण शामिल है। अर्थव्यवस्था को गतिशील बनाये रखने में परिवहन एवं संचार साधन महत्वपूर्ण हैं यह अर्थव्यवस्था की रक्तवाहिनी धमनियों के समान हैं।

14. पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता —यदि मानव भौगोलिक वातावरण (हवा, पानी, मिट्टी, जलवायु आदि) को शुद्ध एवं संतुलित रखता है तो आर्थिक परिवेश दीर्घकाल तक उन्नति करता रहेगा। वास्तव में भौगोलिक पर्यावरण एवं आर्थिक विकास में विपरीत संबंध है। आज आर्थिक विकास के लिये मानव भौगोलिक पर्यावरण को दूषित कर रहा है हम शुद्ध हवा, पानी मिट्टी, जलवायु से बंचित होते जा रहे हैं देश में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का शोषण किया जा रहा है जिससे पारिस्थितिकीय असंतुलन बढ़ रहा है। पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता से दीर्घकालीन एवं स्थायी आर्थिक विकास कर सकते हैं।

15.शिक्षा प्रणाली —देश का आर्थिक विकास शिक्षा प्रणाली एवं प्रशिक्षण व्यवस्था से भी प्रभावित होता है। सामान्य व तकनीकी शिक्षा आर्थिक वातावरण को प्रभावित करती हैं स्वावलम्बन पर जोर देने वाली शिक्षा आर्थिक वातवारण के अनुरूप होती है, यहॉ निरन्तर आर्थिक प्रगति होती है। इंग्लैण्ड की औद्योगिक क्रांति में तकनीकी शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान रहा हैं भारतीय शिक्षा प्रणाली देश की बदलती हुई आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं है, इसलिए शिक्षित बेरोजगारी एवं दासता की मनोवृत्ति पनपी है।

16. जनसंख्या –जनसंख्या की अधिकता या न्यूनता आर्थिक वातावरण को प्रभावित करती हैं जनसंख्या एवं आर्थिक विकास में घनिष्ठ सम्बन्ध है। जहां पर्याप्त मात्रा में कुशल व बुद्धिमान श्रमिक उपलब्ध होते हैं वहॉ औद्योगिक विकास अधिक होता है। दूसरी ओर जनाधिक्य के कारण बेरोजगारी, भूखमरी, गरीबी, अनैतिक कार्य आदि अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो जाती है। इससे जीवन स्तर निम्न रहता हैं। फलस्वरूप राष्ट्रीय आय एवं प्रति व्यक्ति आय कम रहती है।

आर्थिक पर्यावरण में परिवर्तन

आर्थिक पर्यावरण सदैव बदलता रहता है। आर्थिक पर्यावरण को प्रभावित करने वाले अधिकांश तत्व निरन्तर बदलते रहते हैं। तकनीकी में नित नये परिवर्तन होते है।। जनसंख्या का आकार एवं विशेषताएँ बदलती रहती हैं लोगों की प्रवृतियां, फैशन,आधार–विचार, व्यवहार, मनोवृत्ति, नैतिक मान्यताएँ भी बदलती रहती हैं लोगों की आय, सरकारी नीतियॉ, बाजार, की दशाएँ, शासन व्यवस्था, अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियॉ आदि निरन्तर बदलती रहती हैं ये सब तत्व एक दूसरे से जुड़े रहते हैं इसलिए एक में परिवर्तन दूसरे को प्रभावित करता है। फलस्वरूप पूरा आर्थिक वातावरण ही प्रभावित हो जाता है। आर्थिक वातावरण में परिवर्तनों का सही–सही अनुमान लगाना तो कठिन है, किन्तु शुद्ध एवं सही ऑकड़े उपलब्ध होने पर सांख्यिकी द्वारा आर्थिक प्रवृत्तियों के पूर्वानुमान लगाये जा सकते हैं।

(3) तकनीक

(Technic)

सूक्ष्मजीवी विश्व के सभी भागों में व्यापक रूप से फैले हुए हैं । ये आर्कटिक क्षेत्र, उष्णकटिबन्धीय क्षेत्र घने जंगल, बर्फीले प्रदेश, मरूस्थलीय क्षेत्र, गर्म व शीतल जल, तेल–कुएँ वायु, मृदा, मृत पदार्थों, जन्तु व पौधों की देह के बाहर व भीतर, ज्वालामुखी क्षेत्र में भी पाये जाते हैं। ये वायुमण्डल एवं भूमि के विभिन्न स्तरों में रहकर सामान्य जैविक क्रियाएँ करते हुए अपने संख्या में वृद्धि करते रहते हैं। प्रत्येक प्राणी जो इस भूमण्डल में रहता है, श्वांस व भोजन ग्रहण करता है तथा किसी न किसी माध्यम से इन्हें अपनी देह में आमन्त्रित करता रहता हैं। सूक्ष्मजीव हानिकारक व लाभदायक दो प्रकार के होते है। अनेक सूक्ष्मजीव भयानक रोग को जन्म देते हैं वनस्पतियों में भी ये रोग फैलाकर फसल को संदूषित कर हानि पहुँचाते हैं जबकि अनेकों सूक्ष्मजीव वायुमण्डल या मृदा में रहकर प्राकृतिक रूप से उपयोगी क्रियाएँ, जैसे नाइट्रोजन व कार्बन चक्र को नियमित बनाये रखना, मृत कार्बनिक पदार्थों को सरल पदार्थों मे परिवर्तित करना, हमारी देह में रहकर पाचन क्रिया में सहायता करना आदि क्रियाएँ करते रहते हैं।

सूक्ष्म जीवों की अनेक जातियों के ज्ञान के कारण ही आज शल्य चिकित्सा, औषधि विज्ञान एवं प्रौद्योगिक क्षेत्र में व्यापक खोज हुई है। अनेक नाशक जीवों (Pests) का नाश करने या नियंत्रण करने में भी अब जैव कीटनाशी का उपयोग होने लगा है।

सूक्ष्मजीवों की सहायता से पेट्रोलियम पदार्थों या ईंधन की प्राप्ति के मार्ग प्रशस्त हुए हैं। भूमि व सागर के तल से धातुओं की प्राप्ति की विधियॉ खोजी गई हैं अनेक सूक्ष्म जीव अपशिष्ट जल का उपचार करते हैं।

पर्यावरण को सूक्ष्म जीवों से मुक्त करने हेतु निर्यात मार्जक (Vacuum Cleaner) पराबैंगनी किरणों, रासायनिक पदार्थों, तापक्रम प्रभाव, आयनर विधि एवं लैमिनर वायु प्रवाह विधियों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार इनके प्रभाव से भोजन, जल एवं अन्य उपयोगी पदार्थों को बचाया जाता है।

वैक्यूम क्लीनर

(1) धातुओं की पुनः प्राप्ति (Recovery Of Metals) - अनेक जीवाणु मृदा की गहरी पर्तों में पाये जाते हैं, जो विशिष्ट धातुओं के अयस्क (Ore) के साथ जुड़े रहते हैं। अतः ये जीवाणु इन धातुओं या खनिज पदार्थो के सूचकों (Indicators) के रूप में कार्य करते हैं।

सूक्ष्म जीव जल धातुकर्मी उद्योगों में धातुओं को इनके अयस्कों से प्राप्त करने में सहायक होते हैं। इसी से 10000 वर्ष पूर्व तांबे की प्राप्ति में सूक्ष्म जीवों का योगदान रहा है, ऐसे प्रमाण मिले हैं। रोम साहित्य के अनुसार सल्फाइड के खनिजों को विलयशील बनाने में सूक्ष्म जीवों का उपयोग किया जाता था।

सल्फाइड धातुओं का ऑक्सीकरण कर सल्फेट एवं सल्फ्यूरिक अम्ल बनाने हेतु जीवाणुओं का उपयोग किया जाता है। जीवाणुओं का उपयोग कॉपर, बेनेडियम, निकल, मालिब्डीनम, जिंक, आर्सेनिक, एन्टीमनी, सेलेनियम, मैग्नीज एवं यूरेनियम धातुओं के सल्फेट अयस्कों से प्राप्त करने में भी किया जाता है।

कुल साइडेरोकेप्सेसी **(Siderocapsaceae)** के जीवाणु अपने द्वारा स्रावित सम्पुट में लौह एवं मैग्नीज ऑक्साइड एकत्रित कर लेते हैं ये अधिकतर लौह युक्त जल में रहते हैं इनसे धातु प्राप्त करने में सहायता मिलती है।

लौह जीवाणु फेरिक हाइड्रॉक्साइड से संतृप्त रहते हैं और जिस जल स्त्रोत में रहते हैं, इसके तल पर लौह अयस्क का ढेर लगता जाता है, जहां से लौह अयस्क प्राप्त किया जाता है।

जल की गहरी पर्तों में लौह एवं मैंगनीज का ऑक्सीकरण एव अवकरण होता है। यदि कार्बनिक पदार्थों की कमी हो जाती है तो फेरिक ऑक्साइड एवं अन्य ऑक्साइड स्त्रोत के तल पर फेरोमैगनीज अयस्क के रूप में जमा होते रहते हैं।

तॉबे के अयस्क से जैव निक्षालन **(Bioleaching)** तकनीक से तॉबा प्राप्त करने हेतु थायोबोसिलस फेराक्सिडेन्स रसायन कार्बपोषी **(Chemolithorophs)** जीवाणुओं का उपयोग किया जाता है, जिन्हें चट्टानभक्षी जीवाणु **(rock eating bacteria)** भी कहते हैं। अमेरिका में 10 प्रतिशत तॉबे का उत्पादन इसी विधि से किया जाता है। इस जैव तकनीक द्वारा यूरेनियम अयस्कों से यूरेनियम भी प्राप्त किया गया है, जो परमाणु भट्टियों में ऊर्जा प्राप्ति हेतु उपयोग में लाया जाता है। राइजोपस जीवाणु में निम्न श्रेणी के यूरेनियम अयस्क तथा परमाणु भट्टियों से प्राप्त अपशिष्ट को शुद्ध करने की क्षमता पायी जाती है। स्यूडोमोनास जीवाणु का कोबाल्ट, लैड, कैडमियम, पारे व एन्टीमनी के अयस्कों से शुद्ध धातु प्राप्त करने में प्रयोग हो रहा है।

जीवाणुओं की कोशिका में उपस्थित प्रोटीन पदार्थ भारी धातुओं (चांदी, सोना, तांबा, जिंक, लैड) के सम्पर्क में आने पर धात्वीय ऐल्युमिनेट और अम्ल बनाते हैं यह क्रिया आलिगोडायनिक **(Oligodynic)** क्रिया कहलाती है। इस क्रिया के परिणामस्वरूप बाह्य सतह, यदि इन धातुओं या इनसे निर्मित गहनों अथवा बर्तनों, की जीवाणुओं के सम्पर्क में आती है तो इनका क्षय होने लगता है धन आवेश युक्त धातु, ऋण आवेश युक्त जीवाणुओं की सतह पर एकत्रित होने लगता है एवं इनका क्षय होता जाता है। वायरस भी इस प्रकार की क्रिया करते हैं यह क्रिया धातुओं को उनके अयस्कों से पृथक करने में सहायक होती है, जिसका उपयोग धातु उद्योगों में किया जाता है।

(2) पेट्रोलियम की प्राप्ति (Recovery of Petroleum)

भूगर्भशास्त्रियों **(Geologists)** के अनुसार भूगर्भ में पेट्रोलियम पदार्थ वनस्पति व प्राणियों की मृत देह से प्राप्त कार्बनिक पदार्थों से बनते हैं। यह क्रिया जीवाणुओं की सहायता से होती है। समुद्रतल के निक्षेप **(Sediment)** में इन कार्बनिक अवशेषों से तेल की छोटी–छोटी बूंदें बनती है, जो अन्य खनिजों के साथ–साथ पायी जाती है। ये बूंदें रासायनिक क्रियाओं, अधिक दाब व ताप के प्रभाव के कारण अवायवीय वातावरण में समुद्र तल पर संग्रहित हो जाती है।

मृदा एवं समुद्र में रहने वाले सूक्ष्म जीव अपने रहने के स्थान पर कार्बनिक पदार्थो का भण्डार तो उत्पन्न करते ही हैं। साथ ही अधिक गहराई में उपस्थित रहते हुए कोयले, तेल के भण्डार आदि की उपस्थिति के सूचक **(Indicators)** के रूप में भी कार्य करते हैं। तेल के भण्डारों वाले स्थानों में तेल जीवाणु **(Oil bacteria)** पाये जाते हैं, जिनकी उपस्थिति पेट्रोलियम पदार्थों की उपस्थिति दर्शाती है। ये पैराफिन को पोषक पदार्थ के रूप में ग्रहण करते हैं।

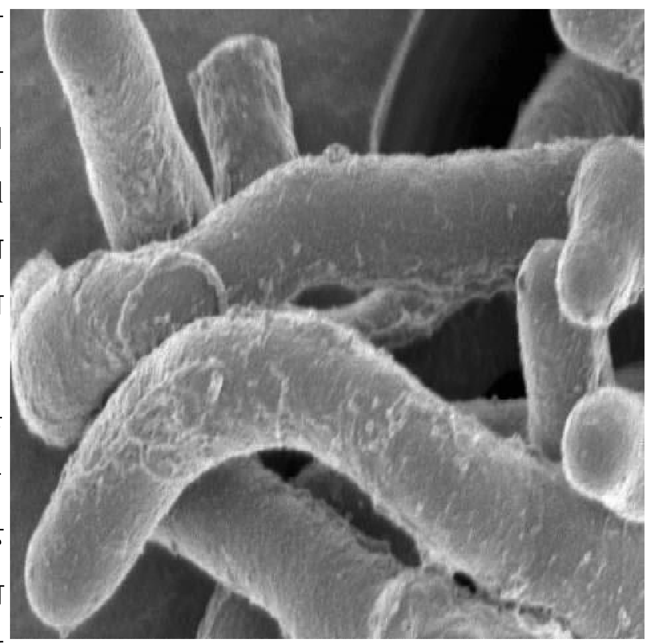

तेल जीवाणु (प्रवर्धित चित्र)

जेन्थोमोनस **(Xanthomonas)** जाति के जीवाणुओं में यह गुण पाया गया है कि ये पॉलिसेकेराइड्स का मोटा आवरण अपनी देह सतह पर बनाते हैं। इनका उपयोग उस जल की विस्कासिता बढ़ाने के काम आता है। जो तेल कूपों से तेल की प्राप्ति में सहायक होता है। यह विधि निः शोषित तेल कूपों से तेल निकालने हेतु काम में लाई जाती है। जेन्थन गम नामक श्यानक की प्राप्ति इस जीवाणु से की जाती है। इस चिपचिपे डिटरजेन्ट पदार्थ को पम्प द्वारा तेल कूपों में डाला जाता है, जिससे चट्टानों से चिपके तेल–कण अलग हो जाते हैं। जल के साथ जेन्थन गम मिलकर, तेल कुओं में खनिज तेल की अधिकाधिक मात्रा को एकत्र कर देता है, जिसका निष्कासन पम्पों द्वारा कर लिया जाता है।

इसी प्रकार बेसिलस व क्लोस्ट्रीडियम जाति के कुछ जीवाणुओं का उपयोग भी इस कार्य में करते हैं। इन जीवाणुओं का निवेशन करने के साथ ही पोषक पदार्थ शर्करा व खनिज लवण भी तेल कूपों में मिलाये जाते हैं। ये कार्बन डाई ऑक्साइड का उत्पादन करते हैं, जो गैस दाब को बढ़ाती है, जिससे तेलपाइप में दाब बढ़ जाता है एवं पेट्रोलियम पदार्थ बाहर आ जाता है।

(3) नाशकजीव नियंत्रण (Pest Control) -

कीटनाशी **(Insecticides)** रासायनिक प्रकृति के एवं जैविक प्रकृति के वे पदार्थ हैं, जो नाशकजीव **(Pest)** नियन्त्रण हेतु उपयोग में लिये जाते हैं। रासायनिक प्रकृति के कीटनाशी हानिकारक हैं, लेकिन जैविक प्रकृति के निरापद हैं।

स्टेन्हॉस **(Stanhaus;1949)** नामक वैज्ञानिक ने नाशकजीवों की सूक्ष्मजीवों के द्वारा नियंत्रण करने की विधि प्रस्तुत की, जिसके अन्तर्गत नाशकजीव की देह में सूक्ष्मजीवों (बैक्टीरिया, वाइरस) के द्वारा रोग उत्पन्न किया जाता है, जिससे कीट या अन्य हानिकारक जीव–जन्तु की मृत्यु हो जाती है। नाशक जीवों पर नियंत्रण हो जाता है। जीवाणु, वायरस, प्रोटोजोआ, चिचिडियों**(mites)** को नियंत्रित किया जाता है।

सूक्ष्म जीवनाशक जीव की देह में संक्रमण उत्पन्न करके अथवा परिवर्तन में बाधा उपस्थित करके या आविष **(Toxin)** उत्पन्न करके कीट की सामान्य क्रिया को रोक देता है और इस प्रकार नाशकजीव की मृत्यु हो जाती है या वह इतना दुर्बल हो जाता है कि जनन, पाचन या परिवर्तन की क्रियाओं को पूर्ण न कर सके, अतः इनकी समष्टि का नियंत्रण हो जाता है। कीट रोगजनक सूक्ष्मजीवों को दो समूहों में विभक्त किया गया है.

(1) आमाशयी सूक्ष्मजीवी कीटनाशी–इसमें जीवाणु, प्रोटोजोआ व वाइरस आते हैं, जो रासायनिक कीटनाशकों की भॉति कीटों की कार्यिकी को प्रभावित करते हैं।

इस समूह के जीवाणु कीटों की देह में ऊतकों या द्रवों में वृद्धि करना प्रारम्भ कर देते हैं, जो आविष **(Toxin)** उत्पन्न करते हैं, अतः नााशकजीव की मृत्यु हो जाती है।

(2) सम्पर्क सूक्ष्मजीवी कीटनाशी–इस समूह में रोगजनक कवक आते हैं, जो कीटों की त्वचा या अध्यावरण के सम्पर्क में आने पर इनकी देह में प्रवेश कर जाते हैं और इनकी मृत्यु हो जाती है।

बेसिलस थूरिन्जिएन्सिस बरलिनर **(Bacillus thuringiensis berliner)**जीवाणु पाउडर या इमलशन के रूप में उपलब्ध हो जाते हैं। इन्हें रासायनिक कीटनाशी की भांति जल में छिड़क दिया जाता है। यह पेरास्पोरलकाय **(Parasoporal body)** नामक क्रिस्टल बनाता है जो जैवविष **(Biotoxin)** होता है। जल में उपस्थित मच्छरों के लार्वा, कीट, पोषक पदार्थों के साथ इनका भी भक्षण करते हैं, जिससे इनकी देह में संक्रमण उत्पन्न हो जाता है व कीट की मृत्यु हो जाती है।

इस कीटनाशी का उत्पादन कई कम्पनियों के माध्यम से हो रहा है। इसका उपयोग सब्जियों, फसलों, बगीचे के पौधों व फलों, भण्डारित अनाज एवं मुर्गी पालन की कीटों से रक्षा हेतु व्यापक रूप में किया जा रहा है। यह आटे, बादाम, तम्बाकू आदि में लगने वाले कीटों से भी सुरक्षा प्रदान करता है।

सूक्ष्म जैविक नियन्त्रण तकनीक के अनेकों लाभ हैं –

(1) केवल हानिकारक कीट की जनसंख्या प्रभावित होती है, अन्य लाभदायक कीट या जन्तु अप्रभावित रहते हैं।

(2) ये रायायनिक कीटनाशकों की भांति आविष अवशेष **(Toxin residues)** नहीं छोड़ते, अतः अन्य जीव जन्तुओं की हानि नहीं होती है।

(3) इन कीटनाशकों की सूक्ष्म मात्रा ही आवश्यक परिणाम उत्पन्न कर देती है।

(4) इनका प्रभाव लम्बे समय तक लगभग 10 वर्षों तक देखा गया है, अतः एक बार उपयोग करने के बाद बार–बार इनकी आवश्यकता नहीं पड़ती है।

विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजैविक कीटनाशी

(अ) जीवाणु –लगभग 100 से अधिक प्रकार के रोगजनक जीवाणु उपलब्ध हैं, जो कीटों में विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न करते हैं इनमें बेसिलसवा, पांपिलिए, बेसिलस मारब्स, स्यूडोमोनास आदि प्रमुख हैं। बे, थूरिन्जिएन्सिस का उपयोग मच्छर के लार्वा, चने के छेदक एवं गन्ने के छेदक एवं अन्य छेदक कीटों के नियंत्रण हेतु किया जाता है।

(ब) कवक –फाइकोमाइसिटिज, एस्कोमाइसिटिज, बेसिडिया माइसिटिज तथा डूयटैरोमाइसिटिज समूह की कवक कीटों की विभिन्न जातियों पर आक्रमण करती है। अनेकों कवक जैसे एस्परजिलस फ्लैब्स, एल्फाटॉक्सिन तथा व्यूवेरिया बेसिएना व्यूवरसिन आदि आविष **(Toxin)** स्त्रावण करते हैं, जिनसे पोषक कीटों की मृत्यु हो जाती है। ये कवक स्तनियों के लिए भी हानिकारक हैं। अतः इनका उपयोग वर्जित है।

4)पोषजैविक यौगिकों का निम्नीकरण(Degradation of Xenobiotic compounds) -

खेतों, खलिहानों, अनाज के एवं अन्य खाद्‌य पदार्थों के संग्रह केन्द्रों, अनाज के गोदामों तथा अपशिष्ट पदार्थों पर नाशकजीव **(Pests)** व कीटों के नियंत्रण हेतु सन् 1600 से रासायनिक कीटनाशी पदार्थों जैसे **DDT, BHC,** लिन्डेन, उल्ड्रिन, डाउल्ड्रिन, क्लोरेडेन, हेप्टाक्लोर का प्रयोग किया जाता रहा है। इनके प्रयोग से पर्यावरण प्रदूषण की समस्या विकराल हो गई है।

ये यौगिक फल, सब्जियों, अनाज, जल, दुग्ध आदि के साथ भोजन श्रृंखला **(Food chain)** का अंश बनकर हमारी देह में प्रवेश कर जाते हैं। ये देह में संग्रहित होते जाते हैं। भोजन श्रृंखला के जितने ऊंचे पद **(Step)** पर जीव होता है एवं जितना अधिक उसका भार होता है, इनकी मात्रा उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है। यह क्रिया जैव–आवर्धन **(Bio-magnification)** कहलाती है। ऐसे पोषजीवक यौगिकों को हटाने की विधियॉ निम्न प्रकार हैं–

1. उपापचय द्वारा (By metabolism) - सूक्ष्म जीव, ऐसे पदार्थों को ग्रहण करने के उपरांत स्वयं ही उपापचयी क्रियाओं द्वारा सरल अणुओं में रूपांतरित कर देते हैं।

2. सह उपापचय द्वारा (By Co- metabolism) - इस विधि में सूक्ष्म जीव स्थानान्तरण क्रिया द्वारा ऊर्जा प्राप्त नहीं करते एवं सहउपापचयी पदार्थ सूक्ष्म जीव की वृद्धि में सहायता नहीं करता।

3. संयुग्मी यौगिकों के निर्माण द्वारा - इस विधि में पोषक जीव यौगिकों के उत्पादों को अन्य जैविक प्राकृतिक पदार्थों जैसे अमीनो अम्ल, शर्करा आदि के साथ संयुग्मी पदार्थ बनाकर अहानिकारक बना दिया जाता है। डाईथिओकार्बमेट **(Dithiocarbamate)** नामक कवकनाशी इसका उदाहरण है। स्यूडोमोनास पुटिडा **(Pseudomonas Puttida) -** नामक जीवाणु ऐसा प्लाज्मिड रखता है, जो ऑक्टेन, जाइलीन, मेटाजाइलीन एवं कपूर आदि रसायनों को विखण्डित करने हेतु किण्वकों का उत्पादन करता है। यह समुद्र की सतह पर फैले पेट्रोलियम पदार्थ व तेलीय पदार्थों का विघटन करने की क्षमता रखता है।

5) पृष्ठ सक्रियकों का निम्नीकरण (Degradation of surfactants) -

जल में झाग उत्पन्न करने वाले पदार्थ पृष्ठ सक्रियक **(Surfactants)** कहलाते हैं। जल स्वयं अपनी गति से भी झाग उत्पन्न करता है किन्तु वास्तव में यह क्रिया अनेक जलीय पादपों व प्राणियों द्वारा ऐसे कार्बनिक पदार्थ के संश्लेषण करने एवं इन्हें जल में त्यागे जाने के कारण होती है। शुद्ध जल का घनत्व 0.997 ग्राम/सेमी होता है, जबकि समुद्री जल का घनत्व 1.02822 ग्राम/सेमी होता है। ताप द्वारा जल की श्यानता बदलती है। पृष्ठ सक्रियकों द्वारा जल का पृष्ठ तनाव बदलता है। पृष्ठ सक्रियकों के उदाहरण वसीय पदार्थ, पेट्रोलियम पदार्थ, डिटरजेन्ट, साबुन आदि हैं। जलीय जीव–जन्तु एवं पादपों के वितरण एवं गतिविधियों पर पृष्ठ सक्रियकों का बहुत प्रभाव पड़ता है। अनेक प्राणी इसके कारण जल सतह पर उतरते रहते हैं, कुछ तैरते रहते हैं या निश्चल पड़े रहते हैं। अनेक पादप व शैवाल शीघ्रता के साथ जल सतह पर फैल जाती हैं।

पृष्ठ सक्रियक जल प्रदूषक हैं। इनका निम्नीकरण प्रकृति में ऑक्सीकारी जीवाणुओं द्वारा किया जाता है। प्रयोगशाला में यह क्रिया जल में एल्यूमिनियम सल्फेट मिलाकर जल पृष्ठ सक्रियकों का स्कन्ध करा कर की जाती है। ये इस क्रिया द्वारा जल के पेंदे में बैठ जाते हैं तथा स्वच्छ जल सतह से निथार कर पृथक कर लिया जाता है।

6) सूक्ष्म जीवों द्वारा प्रदूषण नियंत्रण (Micro-organism in pollution control) -

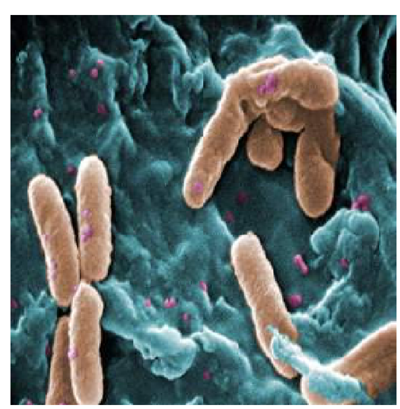

स्यूडोमोनास (प्रवर्धित चित्र)

वाहितमल व अपशिष्ट जल में उपस्थित कार्बनिक पदार्थों को नष्ट करने का कार्य अनेक वायवीय **(Aerobic)** एवं अवायवीय **(Anaerobic)** सूक्ष्म जीवों द्वारा किया जाता है। दुग्ध, पनीर बनाने वाली डेयरी के अपशिष्ट जल, यीस्ट, तेल आदि उद्योगों के जल, आलू व स्टार्च के कारखानों से अपशिष्टों को नष्ट करने की क्रिया अवायवीय विधि से की जाती है। इस प्रकार इन कारखानों से उठने वाली दुर्गन्ध से बचा जा सकता है। इस क्रिया में मीथेन गैस बनती है, जिसका उपयोग ईंधन **(Fuel)** क रूप में करते हैं। स्यूडोमोनास जाति का जीवाणु अनेक हाइड्रोकार्बन यौगिकों व एरोमेटिक यौगिकों का अपघटन कर अहानिकारक या कम विषालु पदार्थों में रूपान्तरित

और अपघटित करने की क्षमता रखता है। कुछ सूक्ष्मजीव एक सूक्ष्मजीव द्वारा अपघटित कार्बनिक पदार्थ को पुनः और अपघटित कर इस क्रिया को सम्पन्न कराते हैं।

7) सूक्ष्मजीव एवं जैवभार उत्पादन (Microbes and biomass production) -

सौर ऊर्जा का उपयोग कर ताप, विद्युत एवं संश्लेषणीय ईंधन प्राप्त कर सकते हैं। घास, गन्ना, शैवाल, वन या जंगली पौधे सौर ऊर्जा का उपयोग कर जैवभार में वृद्धि करते हैं। इनसे जीवाश्मीय ईंधन बनता है।

8) इथेनॉल, हाइड्रोकार्बन एवं हाइड्रोजन का उत्पादन (Production of Ethanol, Hydrocarbon and Hydrogen) -

इथेनॉल एक उच्च कोटि का ईंधन है। यह रासायनिक व प्लास्टिक उद्योग में कच्चा माल के रूप में प्रयुक्त होता है। इसका उत्पादन वनस्पतिक जैवभार से प्राप्त कार्बोहाइड्रेट्स के सूक्ष्म जैविक किण्वन **(Fermentation)** द्वारा किया जाता है। पौधे, मक्का **(Maize),** आलू, गन्ना, अन्नानास, चुकन्दर, शकरकन्द व ज्वार से मुख्य शर्करा सूक्रोस **(Sucrose)** प्राप्त कर इनका सूक्ष्मजीवों द्वारा निश्चित ताप पर किण्वन, कराकर इथेनॉल प्राप्त किया जाता है। यह पेट्रोल के साथ **20%** के अनुपात में मिलाकर ईंधन के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। **94%** हाइड्रेटेड इथेनाल को पेट्रोल के साथ मिलाये बिना ईंधन के रूप में उपयोग लाते हैं।

यूफोरबिएसी कुल के पौधे लेटेक्स **(Latex)** का स्त्रावण करते हैं। लेटेक्स में **70%** जल एवं **30%** हाइड्रोकार्बन होते हैं। हाइड्रोकार्बन का उपयोग गैसोलीन निर्माण हेतु किया जाता है। कोशीय शैवाल बोट्रीकॉकस ब्रान्टी **(Bortycoccus braunti)** के शुष्क द्रव्य में **15%** से **75%** हाइड्रोकार्बन होते हैं। इनका उपयोग पेट्रोकेमिकल्स के रूप में संभव है।

तरल हाइड्रोजन उच्च कोटि का ईंधन है, जो सुगमता के साथ संग्रह किया जा सकता है, एक स्थान से दूसरे स्थान तक लाया, ले जाया, जा सकता है। यह प्रदूषण भी नहीं फैलाता है। इसके लिए कच्चामाल जल है, जिसका H_2 व O_2 में विघटन किया जाता है।

(4) सामाजिक
(Social)

पर्यावरण हमारा सुरक्षा कवच है। जब कवच बहुत अच्छा होगा (अर्थात पर्यावरण प्रदूषित नहीं होगा व पर्याप्त मात्रा में होगा) तो हमारा पूर्ण विकास होगा, हम पूर्ण मानव बन सकेंगे जो विकास की अंतिम परिणति है।

अतः हम सभी की सामूहिक जिम्मेदारी है कि हम पर्यावरण का संरक्षण (संतुलित दोहन) कर, उसके बढ़ते प्रदूषण को पहले रोकने का प्रयास करें और बाद में विभिन्न प्रकार की टेक्नोलॉजी **(Technology)** अपना कर उसके प्रदूषण को कम करें। यह करना अति आवश्यक भी है क्योंकि इसका कोई विकल्प नहीं है।

इसके लिए सरकार तथा स्वयंसेवी संस्थाओं की मदद ली जा सकती है। आज सभी विकसित तथा विकासशील देशों में पर्यावरण के प्रति जागरूकता बढ़ी है। पर्यावरण प्रदूषण की रोकथाम के लिए हम सभी को

समाज के साथ जुड़कर पर्यावरणीय प्रदूषण नियंत्रण संबंधी कार्यक्रम स्थानीय, प्रादेशिक एवं राष्ट्रीय स्तर पर बनाये जाने चाहिए और सरकार को उनकी कड़ाई से पालन सुनिश्चित करना चाहिए। सर्वप्रथम हमारा यह प्रयास होना चाहिए कि हम अपने चारों और फैल रहे प्रदूषण को रोकें, यह तब ही संभव हो सकता है यदि–

1. सरकार द्वारा सभी उद्योगों के प्रदूषण रोधक संयंत्र (फिल्टर, भाप संग्राहक, वैद्युत अवक्षेप, अवशोषक) लगाने को अनिवार्य बनाना चाहिए तथा प्रदूषण रोधक यंत्रों की जांच समय–समय पर की जानी चाहिए कि वह मानकों के अनुरूप है अथवा नहीं।

विद्युत चालित अवक्षेपक संयंत्र

2. नये उद्योग स्थापित करने पर पर्यावरण प्रदूषण के नियमों का कड़ाई से पालन किया जाये तथा फैक्ट्री एक्ट में भी आवश्यक संशोधन किये जाने चाहिए।

3. समाज के सभी लोगों को चाहिए कि वे इस बात का ध्यान रखें कि गली–मोहल्लों में कूड़े–कचरे के ढेर न लगने दें, समय रहते उनकी सफाई करें तथा गन्दगी से उत्पन्न बीमारियों के बारे में लोगों को आगाह करें।

4. वाहन प्रदूषण से बचने के लिए सभी वाहन चालकों को अपने वाहनों की समय–समय पर प्रदूषण सम्बन्धी जॉच करानी चाहिए और समाजसेवी लोगों को छुट्टियों तथा विशेष अवसरों पर सड़कों पर केम्प का आयोजन कर उनके द्वारा वाहन चालकों को प्रदूषण सम्बन्धी जानकारी दी जानी चाहिए।

5. सार्वजनिक स्थलों पर कूड़ा–कचरा डालने हेतु समुचित व्यवस्था की जानी चाहिए तथा दीवारों पर स्लोगन लिखे जाने चाहिए।

6. लोगों के मस्तिष्क में यह बात बैठानी चाहिए कि उनके सहयोग के बिना प्रदूषण नियंत्रण सम्भव नहीं हैं। उन्हें यह बात समझानी चाहिए कि रेल्वे स्टेशन, बस स्टैण्ड, पार्क, सिनेमा हॉल, धर्मशाला आदि पर व्यर्थ पानी न बहायें, रास्ते में कूड़ा–करकट न फेंकें, जोर–जोर से बातें न करें, धूम्रपान व नशीले पदार्थों का सेवन न करें अथवा ऐसा व्यवहार न करें जिससे प्रदूषण फैलता हो।

7. सरकार द्वारा सस्ते एवं स्वच्छ शौचालयों हेतु लागू योजनाओं की जानकारी ग्रामीणों को दी जानी चाहिए क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में खुले स्थानों पर शौच आदि करने से प्रदूषण फैलता है।

8. ग्रामीण क्षेत्र में पर्यावरण प्रदूषण संबंधी अनौपचारिक शिक्षा ग्रामवासियों को समय–समय पर दी जानी चाहिए, जिससे पर्यावरण के प्रति वह जागरूक हो सके।

9. सार्वजनिक स्थलों पर धूम्रपान पूर्णतः प्रतिबंधित होना चाहिए। यदि कोई व्यक्ति धूम्रपान करने वाले के संपर्क में रहता है, तो उस पर भी धूम्रपान का 50 प्रतिशत से अधिक प्रभाव होता है।

10. सरकार द्वारा जनता के सहयोग से वनों के पुनः उत्थान के लिए तेजी से प्रयास किये जाने चाहिए। वृक्षारोपण को राष्ट्रीय कार्यक्रम मानना चाहिए।

11. उद्योगों के लिए यह अनिवार्य हो कि वह मशीनों की ध्वनि को माप कर उसी के अनुसार साइलेन्सर का प्रयोग करें। नयी मशीन से शोर कम होता है, अतः मशीनों का समय–समय पर नवीनीकरण करते रहना चाहिए।

12. वाहनों के निर्माण में नयी तकनीक का प्रयोग किया जाना चाहिए।

13. वाहनों में सी.एन.जी. गैस तथा सीसा रहित पेट्रोल का ही प्रयोग अधिकांशतः किया जाये।

14. प्रदूषण फैलाने वाले वाहनों एवं एक सीमा से अधिक पुराने वाहनों की प्रदूषण संबंधी जॉच प्रदूषण नियंत्रण विभाग द्वारा समय–समय पर अनिवार्य रूप से की जाये।

15. खेतों में रासायनिक खाद एवं रासायनिक कीटनाशक दवाईयों का प्रयोग करते समय यह ध्यान रखा जाये कि उनका पानी बहकर पीने वाले जलाशयों में तो नहीं जाता है। कृषकों को जैविक खाद तथा जैविक कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए।

16. घर से निकलने वाले गंदे पानी, वाहित मल, कारखानों से निकले अवशिष्ट पदार्थों आदि को नदियों, नहरों या समुद्र में नहीं गिरना चाहिए तथा कूड़ा–करकट को भी जलाशयों में न डालकर गांव अथवा शहर के बाहर गड्ढों में डालकर मिट्टी से ढॅक देना चाहिए।

17. जिन सड़कों पर वाहनों की संख्या अधिक हो वे अनिवार्य रूप से पक्की बनाई जाये, जिससे वायु प्रदूषित न हो तथा सड़कों के किनारे अधिक से अधिक वृक्ष लगाये जाने चाहिए।

18. औद्योगिक इकाईयों एवं ईंट भट्टों की चिमनियों को अधिक ऊॅचा बनाना चाहिए तथा चिमनियों में फिल्टर तथा विशेष छन्ने लगाये जाने चाहिए और इनकी स्थापना आबादी वाले क्षेत्र से दूर होनी चाहिए।

19. ग्रामीण क्षेत्र में पशुओं के गोबर को खुले में बाहर न डालकर गोबर गैस संयंत्र लगाकर उसमें प्रयोग करना चाहिए।

20. शहरी तथा अर्द्धशहरी क्षेत्रों में सुलभ शौचालयों तथा विद्युत शवदाह गृहों की स्थापना की जानी चाहिए जिससे गन्दगी व अधजले शवों तथा कार्बनिक पदार्थों को नदियों में बहने से रोका जा सके।

21. सभी स्तरों पर शिक्षा के क्षेत्र में पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रण संबंधी जानकारी विद्यार्थियों को दी जानी चाहिए।

22. समाज में यह जागरूकता पैदा करनी होगी कि वन संरक्षण से पर्यावरण संरक्षण काफी हद तक संभव है। हमें हर घर में एक हरा पेड़ अवश्य लगाना चाहिए। स्कूलों, सड़कों, गलियों, खलिहानों, खेतों आदि में जहॉ पेड़ लगाने की जगह हो, पेड़ अवश्य लगाया जाए और उसकी परवरिश भी की जाये।

23. ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रों में जहॉ पीने हेतु कुंओं पर निर्भरता है, कुंओं को ढॅककर रखा जाये और प्रतिमाह पोटैशियम परमैग्नेट तथा ब्लीचिंग पाउडर डालकर पानी को शुद्ध रखा जाये।

24. मानव द्वारा भौतिक सुख–सुविधाओं की प्राप्ति हेतु किये जाने वाले प्रकृति के विनाश एवं उससे उत्पन्न खतरों की जानकारी की शिक्षा का प्रावधान जरूरी है।

25. प्राकृतिक संसाधनों का शोषण करने वाले एवं पर्यावरण प्रदूषित करने वाले व्यक्ति का सामूहिक रूप से दंड का विचार होना चाहिए।

26 सामाजिक संगठन सरकार को आगाह करें कि वह बीड़ी, सिगरेट, शराब इत्यादी नशीली पदार्थों की बिक्री बंद करे।

27. शालाओं में ईको क्लब (प्रकृति क्लब) का निर्माण करें। इसके लिए केन्द्रीय पर्यावरण एवं वन मंत्रालय 2500 रूपए वार्षिक आर्थिक सहायता प्रदान करता है।

विद्यालय में ईको क्लब

28. जिला स्तर पर पर्यावरण वाहिनी गठित की जानी चाहिए। इसमें प्रशासक, विद्यार्थी, शिक्षा शास्त्री, स्वयंसेवी संस्था के सदस्य, सामाजिक कार्यकर्ता, प्रतिष्ठित नागरिक आदि 100 सदस्य हो सकते हैं। प्रत्येक सदस्य को 100 रूपए प्रतिमाह सरकार देती है, जिन्हें पर्यावरण संबंधी गतिविधि पर खर्च कर सकते हैं। सदस्य, क्षेत्र में प्रदूषण फैलाने वाले उद्योग या अन्य तंत्र के बारे में लिखित सूचना दे सकता है, जिस पर जिलाधीश अविलम्ब कार्यवाही करेंगे। जिलाधीश इस संगठन के अध्यक्ष होते हैं।

29. पर्यावरण संरक्षण एवं पर्यावरण प्रदूषण को रोकने व कम करने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में मेलों व त्यौहारों के समय विशेष प्रदर्शनियॉ आयोजित की जानी चाहिए। पोस्टर, स्लाइड और दृश्य श्रव्य सामग्री द्वारा प्रचार प्रसार होना चाहिए।

30. राज्य सरकारों, व्यक्तिगत संस्थाओं को अपराम्परागत साधनों बायोगैस, सौर ऊर्जा के चूल्हे, निर्धूम चूल्हे, पानी गर्म करने के हीटर आदि का विकास करना चाहिए।

31. सरकार को चाहिए कि वह रसोई गैस एलपीजी को आसानी से उपलब्ध कराये जिससे वनों का कटान, कम हो सके।

32. घरों में ट्यूबवेल खोदकर लोग जल का शोषण कर रहे हैं, इस पर पाबंदी लगानी चाहिए।

33. शहरों में प्रदूषण रोकने हेतु ग्रामीणों को शहरों की तरफ पलायन से रोकना होगा। इस हेतु ग्रामीण उद्योगों तकनीकों की जानकारी जरूरी है। जैसे–गुड़ निर्माण, बांस उद्योग, उद्यान, कृषि से प्राप्त उत्पाद पर आधारित उद्योग कमजोर वर्ग के लोगों के विकास हेतु मददगार हो सकते हैं। भूमिहीनों के लिए उद्योग जैसे–बढ़ईगिरी, रस्सी, टोकरी, ईंट एवं बड़ी बनाना, तेन्दू पत्ते का संग्रहण विकास में मददगार

हो सकते हैं। हथकरघा, सिलाई, ट्रेक्टर, साइकिल, जीप की मरम्मत, टंकण कार्य उपयुक्त उद्योग है। बालबाड़ी के माध्यम से बच्चों की शिक्षा, राष्ट्रीय साक्षरता अभियान के द्वारा सफाई, स्वास्थ्य, संतुलित आहार की शिक्षा देनी चाहिए।

34. पारिस्थितिक विस्थापितों, नवीनीकरण, क्षरण, भूकम्प, जैव–विविधता में कमी, विद्युत संचरण में हानियों को रोकने हेतु बड़े बांधों की तुलना में छोटे बॉधों के निर्माण पर जोर देना चाहिए।

35. बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को भारतीय संसाधनों के उपयोग एवं उनके अनुचित उत्पादों का भारतीय बाजारों में प्रवेश पर प्रतिबंध आवश्यक है।

36. ग्रामीण पुनर्निर्माण हेतु परिवार को लघु इकाई एवं 10–15 ग्रामों के बीच सेवा केन्द्र तथा विकासखंड मुख्यालय के विकास केन्द्र के रूप में विकसित करना होगा।

37. परिवार कल्याण कार्यक्रम को 'प्रदूषित पर्यावरण हमारे लिए खतरा है' की जानकारी देकर प्रभावी बनाना चाहिए।

38. श्रव्य दृश्य साधनों तथा रेडियो एवं समाचार पत्रों के माध्यम से लोगों की छोटे परिवार की महत्ता समझाना चाहिए। बेटे, बेटी में भेदभाव नहीं करने की जागृति लाना चाहिए।

39. वनों की अनावश्यक कटाई रोकी जानी चाहिए तथा आवश्यक स्थिति में भी परिपक्व पेड़ों को ही कटवाना चाहिए।

40. बढ़ते हुए मरूस्थल को रोकने हेतु मरूप्रदेश में वृक्षारोपण की योजनाओं की अभिवृद्धि करनी चाहिए।

41. उद्योगों से अपशिष्ट पदार्थों को जल में छोड़े जाने की प्रक्रिया को रोकना चाहिए या छोड़ने से पूर्व उपचार करने के लिए बाध्य किया जाना चाहिए।

42. हाल के वर्षों में की गई शोधों के अनुसार डीजल इंजन 40 प्रतिशत मिथानोल तक मिश्रित ईंधन से चलने में समर्थ है। मिथानोल एक स्वच्छ ज्वलनशील ईंधन है। यह पानी और वाष्प के रूप में परिवर्तित हो जाती है। सरकार को इस तकनीक का प्रयोग करना चाहिए।

पर्यावरण प्रबंधन के कानूनी प्रावधान
(Legal Provisions for Environmental Management)

जून 1972 ई. में स्टाकहोम में सम्पन्न मानव पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र संघ के अधिवेशन के अनुसार ''मनुष्य अपने पर्यावरण का निर्माता एवं शिल्पकार दोनो ही है जिससे उसे भौतिक स्थिरता मिलती है तथा उसे बौद्धिक, नैतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक विकास का सुअवसर प्राप्त होता है।'' इस ग्रह पर मनुष्य जाति की एक लम्बी तथा पीड़ादायक उत्क्रमण यात्रा में एक ऐसी स्थिति आ गयी है जब विज्ञान तथा तकनीकी के तीव्र विस्तार के द्वारा मनुष्य ने एक प्रकार से अपने पर्यावरण की कायापलट करने की क्षमता प्राप्त कर ली है।

पर्यावरण प्रबंधन के लिए अनेक कानूनी प्रावधान बनाये गये हैं जिनकी मुख्य भूमिकाएॅं निम्न हैं –

1. कानून पर्यावरण को क्षति पहुॅंचाने वाले व्यक्ति को दण्डित करता है।
2. कानून पीड़ित को क्षतिपूर्ति दिलवाता है।
3. कानून व्यक्ति को पर्यावरण पर दबाव बढ़ाने से वर्जित करता है।

4. कानून पर्यावरण संरक्षण नीति को कार्यरूप में परिणत करता है।

5. कानून विकास नीति को भी कार्यरूप में परिणत करता है।

भारत में पर्यावरण कानून का इतिहास 115 वर्ष पुराना है। प्रथम कानून 1894 में पास हुआ था जिसमें वायु प्रदूषण नियंत्रणकारी कानून थे। वर्तमान समय में पर्यावरण संरक्षण एक जटिल समस्या है तथा वह सम्पूर्ण विश्व के लिए चुनौती है। आज का बढ़ता हुआ प्रदूषण सम्पूर्ण मानव जाति के लिए अभिशाप बन गया है। मानव के अतिरिक्त वन एवं वन्य जीव प्रदूषण से त्रस्त है। इसीकारण संविधान में पर्यावरण संरक्षण पर विशेष बल दिया जा रहा है तथा इस समस्या से निपटने के लिए समय–समय पर कई कानून भी बनाये गये हैं।

कानूनी स्थिति

(Legal Status)

पर्यावरण कानून का प्रमुख उद्‌देश्य वातावरण के प्रमुख उपहार को प्रदूषण से मुक्त रखना है। भारतीय समाज धार्मिक प्रवृत्ति का होने के कारण यहॉं प्राकृतिक संसाधन (पौधे, जन्तु, नदियॉं) पूजे जाते हैं। इसी कारण प्राचीनकाल में पर्यावरण रक्षा के लिए कोई कानून नहीं बना था लेकिन पिछली सदी से पर्यावरण को बचाने के लिए बड़ी संख्या में कानून बनाये गये। ये सभी कानून तीन श्रेणियों में बॉंटे जा सकते हैं –

1. सामान्य कानून
2. विनियामक कानून
3. विशेष विधान

1. सामान्य कानून (Common Laws):- सामान्य कानून इंग्लैण्ड के परम्परागत कानूनकी संख्या है। यह न्यायिक निर्णयों पर आधारित है और यह अभी तक लागू है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 372 कॉमन लॉ पर आधारित है । इस कानून के अंतर्गत किसी भी कार्य के विरूद्ध जो संपत्ति या व्यक्ति को हानि का कारण बना हो प्रभावित पक्ष क्षतिपूर्ति या निषेधाज्ञा या दोनों का दावा कर सकता है। पर्यावरण प्रदूषण के लिए निम्न तीन कारक हैं:–

(1) व्यवधान

(2) अतिक्रमण

(3) लापरवाही।

2. विनियामक कानून (Statutory Law) - विनियामक प्रावधान जो सभी प्रकार के प्रदूषण को रोकने तथा नियन्त्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है वह इस प्रकार है –

(1) संवैधानिक प्रावधान

(2) नागरिक प्रक्रिया संहिता के प्रावधान

(3) फैक्टरीज एक्ट 1948

(4) वाइल्ड लाइफ प्रोटेक्शन एक्ट 1972

(5) मोटर साईकिल एक्ट 1988

3. विशेष विधान (Specific legislations) - जल एवं वायु प्रदूषण ।

संवैधानिक प्रावधान (Constitutional Provisions) - भारतीय संविधान विश्व का पहला संविधान है, जिसमें पर्यावरण संरक्षण के लिए विशिष्ट प्रावधान है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना यह सुनिश्चित करती है कि हमारा देश समाजवादी समाज की अवधारणा पर आधारित है, जहाँ राज्य व्यक्ति की अपेक्षा सामाजिक समस्याओं को प्राथमिकता देता है। समाजवाद का मूल लक्ष्य है 'सभी को जीवन का सुखद स्तर' उपलब्ध करवाना जो कि केवल एक प्रदूषण मुक्त वातावरण में ही संभव है।

मूल अधिकार

(Fundamental Rights)

अनुच्छेद 19 (1ए) प्रत्येक नागरिक को बोलने तथा अभिव्यक्ति की मूलभूत स्वतंत्रता की गारंटी देता है। इसमें प्रेस की स्वतंत्रता भी शामिल है। यह अनियंत्रित नहीं है। इसे अनुच्छेद 19(2) में वर्णित आधारों पर सीमित किया जा सकता है।

भारत में जनमत तथा मीडिया ने जनसामान्य के पर्यावरण संबंधी मुद्दों के बोध को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। विभिन्न गैर सरकारी संगठनों **(NGO'S)** ने अनुच्छेद 19 (1ए) में प्रदत्त मूलभूत स्वतंत्रता का उपयोग करते हुए पर्यावरण से जुड़े महत्वपूर्ण मुद्दों को उठाया है। उदाहरण के लिए टिहरी डेम प्रोजेक्ट में जनमत तथा मीडिया ने प्रस्तावित बॉध के उचित पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन के लिए तथा प्रोजेक्ट के सभी सुरक्षा पहलुओं पर विस्तार से एकाधिकबार विचार करने के लिए सरकार को बाध्य कर दिया है।

अनुच्छेद 19(1जी) सभी नागरिकों को व्यापार तथा धंधा करने की स्वतंत्रता का अधिकार देता हैं यह अधिकार भी उन्मुक्त नहीं है। इस पर अनुच्छेद 19(6) के अंतर्गत जनता के व्यापक हित में यथोचित प्रतिबंध लगाये जा सकते हैं। इसी अनुच्छेद के तहत एम.सी. मेहता (1996) के केस में उच्चतम न्यायालय में निर्देश दिया था कि खतरनाक, हानिकारक, भारी तथा बड़े पैमाने पर दिल्ली में चल रहे उद्योगों को राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के अन्य उपनगरों में दिल्ली के मास्टरप्लान 2001 के अंतर्गत हटाया या पुनर्स्थापित किया जाए।

सन 1976 में राज्य नीति के निदेशक सिद्धान्तों में 42 वें संविधान संशोधन के द्वारा अनुच्छेद 48 'ए' जोड़ा गया है। जो घोषणा करता है कि 'देश में सरकार पर्यावरण की रक्षा व संवर्द्धन के लिए एवं वनों तथा वन्यजीव की सुरक्षा के लिए प्रयास करेगी'। सन 1976 से पहले पर्यावरण राज्यों की सूची में था किन्तु 42 वें संशोधन के पश्चात यह समवर्ती सूची में सम्मिलित किया गया।

अनुच्छेद 51 ए (जी) हर नागरिक पर यह उत्तरदायित्व डालता है कि वह वनों, झीलों, नदियों तथा वन्यजीवन सहित प्राकृतिक वातावरण का संरक्षण तथा सुधार करें और जीवित प्राणियों के प्रति करूणा रखें।

अनुच्छेद 47, 48 तथा 51 ए (जी) के अनुसार राज्य का यह कर्तव्य है कि वह पर्यावरण तथा नागरिक स्वास्थ्य की रक्षा तथा सुधार करे और जनता के लिए प्रदूषण रहित जल, वायु तथा पर्यावरण सुलभ कराये।

संघीय ढांचा

(Federal Structure)

भारतीय संविधान का भाग–1 एक्स न्यायिक तथा प्रशासनिक संबंधों को नियमित करता है। अनुच्छेद–246 संसद को समूचे देश के लिए कानून बनाने की शक्ति प्रदान करता है, जबकि राज्य न्यायाधिकरण अपने–अपने राज्यों के लिए कानून बनाने की शक्ति रखते हैं। संविधान की अनुसूची **(VII)** संघ तथा राज्यों को पर्यावरण संरक्षण के लिए कानून बनाने की शक्ति प्रदान करते हैं।

पर्यावरण संरक्षण में न्यायपालिका (उच्चतम न्यायालय) की भूमिका –भारत में न्यायपालिका ने पर्यावरण संबंधी जनजागृति लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारतीय संघ (1991) बनाम एम.सी.मेहता के केस में उच्चतम न्यायालय में निम्नलिखित निर्देश आम जनता में पर्यावरण संबंधी जागरूकता बढ़ाने के उद्देश्य से जारी किये –

1. सभी सिनेमा हाल, चल सिनेमा तथा वीडियो पार्लर अनिवार्य रूप से कम से कम दो पर्यावरण फिल्म, संदेश अनिवार्यरूप से प्रत्येक शो में निःशुल्क दिखायेगी। यह उनके लिए लाइसेंस जारी करते समय पूर्व शर्त होगी।

2. पर्यावरण तथा प्रदूषण संबंधी रूचिकर कार्यक्रम का प्रसारण प्रतिदिन 5 से 7 मिनट अवधि के लिए तथा सप्ताह में एक बार लम्बी अवधि के लिए दूरदर्शन तथा आल इंडिया रेडियो द्वारा प्रसारित किया जाना।

3. सिनेमा हाल में प्रतिदिन लघु अवधि की पर्यावरण तथा प्रदूषण संबंधी सूचनाप्रद फिल्म दिखाना।

4. छात्रों में सामान्य जागृति लाने के लिए पर्यावरण को विद्यालयों, कॉलेजों तथा विश्वविद्यालयों में एक अनिवार्य विषय बनाया जाना।

पर्यावरण के संबंध में न्यायिक सक्रियता का सबसे उज्जवल उदाहरण एम.सी. मेहता विरूद्ध भारतीय संघ केस है। इसमें कानपुर से बहते गंगा के जल व तालाबों में बहता चमड़ा कारखाने से औद्योगिक बहिस्त्राव से दूषित होकर विषैला तथा स्वास्थ्य के लिए घातक होने का मामला था। उच्चतम न्यायालय ने अपशिष्ट प्रवाह को रोकने तथा उपचार संयंत्र स्थापित करने के लिए प्रशासन को समयबद्ध निर्देश जारी किये।

उच्चतम न्यायालय ने वाहनों से होने वाले प्रदूषण को रोकने के लिए विभिन्न निर्देश जारी किये हैं जैसे

1. सीसा रहित पेट्रोल का प्रयोग चार महानगरों (दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता, चेन्नई) तथा सन 2000 तक पूरे देश में।

2. नये पंजीकृत वाहनों में कैटालिटिक कन्वर्टर लगे होने चाहिए।

3. दिल्ली में अप्रैल सन् 2001 तक टैक्सियों, आटो रिक्शा तथा बसों में सी.एन. जी. का प्रयोग।

देश की पारिस्थितिकीय स्वास्थ्य में न्यायपालिका द्वारा प्रदर्शित रूचि बने रहने की आवश्यकता है। यह अकेला निकाय है जो पर्यावरण संबंधी मसलों को प्रभावित कर सकता है। उच्चतम न्यायालय के प्रयास आम जनता द्वारा सराहे गये हैं।

भारतीय दण्ड संहिता (IPC) तथा अपराधिक प्रक्रिया संहिता (CRPC) -

भारतीय दंड संहिता का अध्याय **(xiv)** जनता के स्वास्थ्य, सुरक्षा,सुविधा, शालीनता तथा मनोबल से संबंध रखता है। भारतीय दंड संहिता का अनुभाग 268 में सार्वजनिक मनोबल के लिए दण्ड का प्रावधान है। इन

प्रावधानों के अंतर्गत किसी व्यक्ति का कोई भी कृत्य या भूल जो कि दूसरे व्यक्ति को पर्यावरण प्रदूषण के द्वारा क्षति पहुँचाता है, को नियंत्रित किया जा सकता है।

अनुभाग 272 से 276 (भारतीय दंड संहिता) में खाद्य, पेय तथा औषधियों के अपमिश्रण से संबंधित है। अनुभाग 277 (भारतीय दंड संहिता) में जल प्रदूषण की रोकथाम के लिए प्रयोग किया जाता है। अनुभाग 277 के अनुसार यदि किसी सार्वजनिक झरने, कुएँ या जलाशय के जल को दूषित किया जाता है तो तीन मास तक के लिए कारावास या 500/–जुर्माना दोनों से दण्डनीय हैं यदि वह यह कृत अनजाने में नहीं करता है।

अनुभाग 133 **(CRPC)** के अधीन जिला मजिस्ट्रेट या सब डिवीजनल मजिस्ट्रेट या कार्यालय मजिस्ट्रेट यदि उसे राज्य सरकार द्वारा शक्ति प्रदत्त है। पुलिस अधिकारी से प्राप्त रिपोर्ट या अन्य सूचना की प्राप्ति पर, प्रदूषणकारक सार्वजनिक मलीनता को दूर करने के सशर्त आदेश दे सकता है। सशर्त आदेश अंतिम भी हो सकता है तथा यदि संबंधित व्यक्ति उसके अनुपालन में चूक करता है, तो उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 188 के अधीन दण्डित किया जा सकता है।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1980 (संशोधित 1988) इसके निम्नलिखित मुख्य बिन्दु हैं –

1.सरकारी अनुमति के बिना प्राकृतिक वन अन्य प्रकार के वनोपण में परिवर्तित नहीं किया जाना चाहिए।

2.अवैध भूमि अधिग्रहण/अतिक्रमण तथा फसल चक्रण पर प्रभावकारी निगरानी होनी चाहिए।

3.वन प्रबंधन तथा प्रशिक्षण पर बल दिया जाना चाहिए।

4.पर्वतों पर वृक्षों की कटाई 10 हेक्टेयर तथा मैदानों में 20 हेक्टेयर से अधिक नहीं होनी चाहिए।

5.यदि कोई एक वन क्षेत्र को किसी विकास प्रकल्प के लिए रूपान्तरित करता है तो उसे उसके बराबर क्षेत्र पर वनरोपण करना चाहिए।

6.पुनर्वनीकरण के उद्देश्य से किसी भी क्षेत्र को निर्वनीकरण नहीं करना चाहिए।

7.वन भूमि की चराई प्रतिबंधित होनी चाहिए।

8.कानून का कोई भी उल्लंघन दण्डनीय होना चाहिए।

वन (संरक्षण) अधिनियम 1980–वनों के संरक्षण संबंधी कई नियम तथा कानून प्रभावी हैं, लेकिन वनों के संरक्षण के लिए वन संरक्षण अधिनियम 1980 मील का पत्थर सिद्ध हुआ है। इस अधिनियम का मूल उद्देश्य गैर–वानिकी कार्यों के लिए वन क्षेत्रों के उपयोग को निरूत्साहित करना है। इस अधिनियम में राष्ट्र के विकास के लिए यदि कोई भी गैर वानिकी कार्य करवाता है जैसे–सड़क बनाना, बॉध का निर्माण कराना, विद्युत लाइन डालना, खनन कार्य करवाना आदि कार्यों की परियोजनाएँ चालू करना हो तो ऐसी स्थिति में कुछ शर्तों के अंतर्गत वन क्षेत्र के स्थानान्तरण के लिए सरकार के द्वारा अनुमति लेने का प्रावधान भी है।

राज्य सरकार को किसी वन या उजाड़ भूमि को जहॉं चराई तथा कटाई प्रतिबंधित हो आरक्षित वन घोषित करने का अधिकार है। कृषि के लिए चराई तथा वनों की सफाई भी किसी भूखण्ड पर उसे मृदाक्षय से बचाने तथा भू–जल स्तर को बनाये रखने के लिए प्रतिबंधित की जा सकती है।

वन्य जीव संरक्षण अधिनियम 1972 (1991 में संशोधन) – वन्यजीव पारिस्थितिक तंत्र का एक प्रमुख घटक है। पारिस्थितिक संतुलन बनाये रखने, मृदा क्षय रोकने, औषधि, खाद्य, मसालों, सुगंधों आदि का स्त्रोत के रूप में, आर्थिक उत्पादों के स्त्रोत के रूप में, उत्तम नस्लों के प्रजनन के लिए वन्य जीवन अपरिहार्य है। आदिकाल से वन्य जीव को बचाने के लिए विविध न्यायिक उपाय अपनाये गये हैं, जैसे –

1. मद्रास वाइल्ड एलीफेंट प्रीजर्वेशन एक्ट 1873
2. वाइल्ड वर्ड प्रोटेक्शन एक्ट 1887
3. वाइल्ड वर्ड एण्ड एनिमल प्रोटेक्शन एक्ट 1912
4. सेंट्रल बोर्ड आन वाइल्ड लाइफ 1952
5. वाइल्ड लाइफ प्रोटेक्शन एक्ट 1972 संशोधित 1991

वाइल्ड लाईफ प्रोटेक्शन एक्ट के अंतर्गत

1.एक भारतीय वन्य जीवन बोर्ड की स्थापना की गई जिसकी अध्यक्षता भारत के प्रधानमंत्री करते हैं तथा प्रत्येक राज्य के लिए एक वन्य जीवन सलाहकार बोर्ड का गठन किया गया।

2.वन्य जीवन अधिनियम के अंतर्गत कतिपय जैव भौगोलिक क्षेत्रों का गठन किया गया है। वे संकटग्रस्त प्रजातियों को प्राकृतिक आवास, संसाधन तथा संरक्षण उपलब्ध कराते हैं तथा जैव विविधता को सुरक्षित रखते हैं। ये तीन प्रकार के होते हैं –

(1) जैव मंडलीय आरक्षित क्षेत्र

(2) राष्ट्रीय उद्यान

(3) अभ्यारण्य।

3. वन्य जीवन संरक्षण अधिनियम वन्य प्राणियों के शिकार तथा उन्हें पकड़ने को निषेध करता हैं।

4. वन्य उत्पाद जैसे खाल तथा हॉथी दॉत का व्यापार प्रतिबंधित हैं।

5. बोटेनिकल सर्वे ऑफ इण्डिया तथा जूलाजिकल सर्वे ऑफ इंडिया दोनों संकटग्रस्त दुर्लभ तथा आपदाग्रस्त प्रजातियों की सूची तैयार करते हैं।

जल (प्रीवेन्शन एण्ड कन्ट्रोल ऑफ पोल्यूशन) एक्ट 1974, संशोधित 1988

1. जल एक्ट को संविधान के अनुच्छेद 252 (1) के अंतर्गत समाज कल्याण मानक के रूप में जल प्रदूषण की रोकथाम तथा नियंत्रण एवं अभिरक्षण या जल की परिपूर्णता की रक्षा के लिए बनाया गया है।
2. जल प्रदूषण की रोक थाम तथा नियंत्रण के लिए केन्द्रीय तथा राज्य बोर्डों की स्थापना।

केन्द्रीय बोर्ड के कार्य

बोर्ड का प्रमुख कार्य है। राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में जल धाराओं तथा कुओं की स्वच्छता को बढ़ाना। यह निम्नलिखित कार्यों का निष्पादन कर सकता हैः–

1. केन्द्र सरकार को जल प्रदूषण से संबंधित नियंत्रण से संबंधित मामलों में सलाह देना।
2. राज्य बोर्डों की गतिविधियों में समन्वय स्थापित करना या उनके बीच विवादों का समाधान करना।

3. राज्य बोर्डों को तकनीकी सहायता तथा मार्गदर्शन उपलब्ध कराना तथा जल प्रदूषण संबंधी खोज एवं अनुसंधान को प्रायोजित करना।

4. जल प्रदूषण की रोकथाम, नियंत्रण में लगे व्यक्तियों के लिए प्रशिक्षण की योजना तथा आयोजन करना।

5. जन संचार माध्यमों के द्वारा जल प्रदूषण के संबंध में व्यापक कार्यक्रम आयोजित करना।

6. जल प्रदूषण संबंधी तकनीकी एवं सांख्यिकीय ऑकड़ों का संग्रह, संकलन तथा प्रकाशन करना।

7. एक जल धारा या कुएँ के लिए मानक तय करना।

8. जल प्रदूषण की रोकथाम तथा नियंत्रण के लिए राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम की योजना तथा आयोजन करना।

9. किसी अवजल या औद्योगिक अपशिष्ट के नमूनों के विश्लेषण के लिए प्रयोगशालाओं की स्थापना करना या मान्यता देना।

राज्य बोर्ड के कार्य

1. जल प्रदूषण की रोकथाम, नियंत्रण तथा अपशमन के लिए व्यापक कार्यक्रम बनाना।

2. जल प्रदूषण की रोकथाम, नियंत्रण तथा अपशमन से संबंधित मामलों में राज्य सरकार को परामर्श देना।

3. जल प्रदूषण की रोकथाम, नियंत्रण तथा अपशमन से संबंधित सूचनाएँ एकत्र करना तथा प्रसारित करना।

4. जल प्रदूषण नियंत्रण से संबंधित केन्द्रीय बोर्ड के द्वारा आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रमों में सहयोग देना तथा तत्संबंधी व्यापक शिक्षा कार्यक्रमों को आयोजित करना।

5. अवजल, औद्योगिक अपशिष्ट तथा अवजल एवं औद्योगिक उपचार कार्यों तथा संयंत्रों का निरीक्षण करना।

6. अवजल तथा औद्योगिक अपशिष्ट के उपचार के लिए कम खर्चीली तथा भरोसेमंद विधियों को विकसित करना।

7. कृषि में अवजल तथा अनुकूल औद्योगिक अपशिष्टों के उपयोग की विधियॉ विकसित करना।

8. भूमि पर अवजल तथा औद्योगिक अपशिष्ट के निपटान की प्रभावी विधियॉ विकसित करना।

9. किसी जलधारा विशेष में निष्काषित किये जाने वाले अवजल तथा औद्योगिक अपशिष्ट के निपटान के लिए प्रभावी विधियॉ विकसित करना।

10. ऐसे उद्योग जिसके द्वारा किसी जल धारा या कुएँ के जल को प्रदूषित किये जाने का खतरा हो, स्थिति के संबंध में राज्य सरकार को परामर्श देना।

11. किसी अवजल या औद्योगिक अपशिष्ट के पानी के नमूनों के लिए प्रयोगशालाओं की स्थापना करना तथा मान्यता देना।

राज्य बोर्ड की शक्तियॉ

(1) सूचना प्राप्त करने की शक्ति–बोर्ड के पास लोगों से जल के स्थानान्तरण तथा निस्तारण तंत्र की रचना, स्थापना तथा संचालन संबंधी सूचना प्राप्त करने का अधिकार है।

(2) बाह्य स्त्राव के नमूने लेने की शक्ति बोर्ड या कोई प्राधिकृत अधिकारी के पास किसी तंत्र या कुएँ से

पानी के नमूने या किसी अवजल या औद्योगिक बहिस्त्राव के नमूने विश्लेषणार्थ लेने की शक्ति है।

(3) नमूनों के विश्लेषण की रिपोर्ट तीन प्रतियों में बनायी जाएगी एक प्रति संबंधित व्यक्ति या एजेंट, दूसरी प्रति यदि कानूनी कार्यवाही करनी हो तो न्यायालय में प्रस्तुत करने के लिए रखी जाएगी।

(4) राज्य बोर्ड द्वारा प्राधिकृत किसी व्यक्ति के पास बोर्ड की ओर से किसी भी स्थान में किसी संयंत्र, अभिलेख, पंजी, दस्तावेज या किसी पदार्थ की जॉच करने या किसी स्थान की खोजबीन करने तथा किसी दस्तावेज या अन्य पदार्थ को जब्त करने के लिए प्रवेश करने का अधिकार होगा।

(5) प्रदूषक पदार्थ के निपटान इत्यादि के लिए जलधारा तथा कुएॅ के प्रयोग के निषेध का अधिकार।

(6) राज्य बोर्ड किसी उद्योग या उपचार तथा निपटान व्यवस्था की स्थापना की सहमति केवल तभी देगा जबकि बोर्ड द्वारा लागू की गई शर्तों का पालन किया जाता हो। राज्य बोर्ड द्वारा लागू की गई शर्तों का पालन किया जाता है। राज्यबोर्ड द्वारा समय–समय पर उसके द्वारा लागू की गइ शर्तों की समीक्षा करेगा।

(7) जब किसी दुर्घटना या किसी कारण विषैला या प्रदूषक पदार्थ किसी जलधारा या कुएं या भूमि पर मौजूद है या उसके प्रवेश की सम्भावना है तो निम्न में से किसी उद्देश्य के लिए बोर्ड लिखित अभिलेख करते हुए कोई अभियान चला सकता है –

1. उस पदार्थ को हटाना तथा निपटारा करना।
2. इसकी उपस्थिति से उत्पन्न किसी भी प्रदूषण को हटाना तथा उपचार करना।
3. संबंधित व्यक्ति को किसी भी विषैले या प्रदूषक पदार्थ को निस्सारण करने से रोकने तथा निष्क्रिय करने हेतु आदेश जारी करना।

(9) सन् 1988 में जोड़े गये नये प्रावधान के अंतर्गत बोर्ड अपनी शक्ति के प्रयोग तथा उसके कार्य निर्वहन में किसी व्यक्ति को कोई आदेश दे सकता है, जिसमें –

1. किसी उद्योग, अभियान या प्रक्रिया को बंद करना, रोकना या नियमन
2. बिजली, पानी या अन्य किसी सेवा को रोकना या नियमन सम्मिलित है।

(10) किसी विषैले पदार्थ या प्रदूषक पदार्थ के किसी धारा, कुऍ या भूमि पर प्रसार होने देने पर डेढ़ वर्ष से छह वर्ष तक कारावास तथा जुर्माने का दण्ड है।

एअर (प्रीवेन्शन एण्ड कंट्रोल ऑफ पोल्यूशन) एक्ट 1981, 1987 में संशोधित –

जून 1972 ई. में स्टाक होम में आयोजित मानव पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन में लिये गये निर्णयों को लागू करने के उद्देश्य से अनुच्छेद के अंतर्गत एअरएक्ट लाया गया था। इसका अधिकारिक क्षेत्र पूरा भारत है।

इसके मुख्य उद्देश्य हैं –

1. वायु प्रदूषण की रोकथाम, नियंत्रण तथा उपशमन के लिए प्रावधान।
2. केन्द्रीय तथा राज्य बोर्डों की स्थापना के लिए प्रावधान।
3. ऐसे बोर्डों की शक्तियॉ प्रदान करने तथा उनके क्रियाकलाप तय करने का प्रावधान।

बोर्ड का संयोजन तथा सदस्यों की अर्हता तथा अनर्हता वाटर एक्ट के अधीन गठित बोर्ड के समान है।

केन्द्रीय बोर्ड के कार्य

1. वायु प्रदूषण की रोकथाम, नियंत्रण तथा उपशमन के लिए राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम बनाना तथा उसे लागू करवाना।
2. वायु के गुणवत्ता में सुधार तथा वायु प्रदूषण से संबंधित मुद्दों पर केन्द सरकार तथा राज्य बोर्डों को सलाह देना।
3. नमूनों के विश्लेषण के लिए प्रयोगशालाओं को स्थापित तथा चिन्हित करना।
4. शुद्ध वायु के मानक तय करना।
5. जनता को वायु प्रदूषण के कारण, प्रभाव, रोकथाम तथा नियंत्रण के बारे में शिक्षित करने के लिए प्रसारण माध्यमों की सेवाओं का उपयोग करना।
6. वायु प्रदूषण के क्षेत्र में लोगों के प्रशिक्षण की योजना तथा आयोजन करना।

राज्य बोर्ड के कार्य

1. वायु प्रदूषण की रोकथाम तथा नियंत्रण के लिए कार्यक्रमों की योजना बनाना।
2. राज्य सरकार को वायु प्रदूषण नियंत्रण क्षेत्र घोषित करने योग्य क्षेत्र तथा वायु प्रदूषण की सम्भावना वाले उद्योगों का पता लगाने के संबंध में सलाह देना।
3. समय–समय पर वायु प्रदूषण नियंत्रण क्षेत्र की वायु की गुणवत्ता का निरीक्षण करना तथा वायु प्रदूषण को घटाने के लिए कदम उठाना।
4. वायु प्रदूषण के कारण, रोकथाम एवं नियंत्रण संबंधी सूचना एकत्रित तथा प्रचारित करना।

राज्य बोर्ड की शक्तियाँ

1. राज्य बोर्ड वायु प्रदूषण नियंत्रण वाले क्षेत्रों में औद्योगिक कार्यों को परिसीमित कर सकता है।
2. राज्य सरकार को राज्य की सीमा के भीतर किसी भी क्षेत्र को वायु प्रदूषण नियंत्रित क्षेत्र घोषित करने की संस्तुति करना। सम्पूर्ण पंजाब वायु प्रदूषण नियंत्रित क्षेत्र घोषित किया गया है।
3. राज्य बोर्ड की संस्तुति पर राज्य सरकार उद्योग को केवल स्वीकृत ईंधन तथा स्वीकृत उपस्कर प्रयोग करने के निर्देश दे सकती है। यह किसी भी पदार्थ के जलाये जाने को प्रतिबंधित कर सकती है।
4. बोर्ड वायु या उत्सर्जन नमूनों को विश्लेषण के लिए ले सकता है।
5. बोर्ड किसी भी उद्योग से सहमति वापस ले सकता है तथा नयी शर्तें लागू कर सकता है।
6. बोर्ड मोटर वाहन उत्सर्जन के मानकों के लिए मोटर वाहन अधिनियम के अंतर्गत प्राधिकरणों/अधिकारियों को निर्देश दे सकता है।
7. बोर्ड द्वारा तय मानकों से अधिक वायु प्रदूषण उत्सर्जन होने पर डेढ़ वर्ष से छह वर्ष तक कठोर कारावास या दण्ड का जुर्माना होगा। यदि विफलता जारी रहती है तो प्रथम दोष सिद्धि के बाद पॉच हजार रूपए प्रतिदिन का अतिरिक्त जुर्माना होगा।

प्रश्न और अभ्यास

अति लघुउत्तरीय प्रश्न

1. पर्यावरण से क्या तात्पर्य है ?
2. कणिकीय प्रदूषकों के निस्तारण करने के लिए किस यंत्र का उपयोग करते हैं ।
3. प्रदूषित जल में उपस्थित रासायनिक पदार्थों द्वारा मनुष्यों के स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ता है ?
4. सिन्थेटिक दूध के दुष्प्रभावों के प्रबंधन के क्या उपाय हैं ?
5. हमें घर के पास बगीचा क्यों विकसित करना चाहिए ?
6. तरल हाइड्रोजन उच्च कोटि का ईंधन क्यों है ?
7. पर्यावरण प्रबंधन में कानून की क्या भूमिका है ?
8. एअर एक्ट के क्या उद्देश्य हैं ?

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. वायु प्रदूषण नियंत्रण के उपाय समझाइए।
2. मृदा प्रदूषण के प्रभाव को समझाइए।
3. पालीथिन प्रयोग के दुष्प्रभाव को समझाइए। इसे किस प्रकार नियंत्रित किया जा सकता है ?
4. पर्यावरणीय प्रबंधन के आर्थिक पक्ष के क्या उद्देश्य हैं ?
5. पर्यावरण प्रबंधन के सामाजिक पहलू पर संक्षिप्त रूप से प्रकाश डालिए।
6. पर्यावरण संरक्षण में उच्चतम न्यायालय की क्या भूमिका है ?
7. जल एक्ट में राज्य बोर्ड के क्या कार्य हैं ?

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. जल प्रदूषण के प्रमुख प्रभावों को लिखिए। जल प्रदूषण नियंत्रण के क्या उपाय है?
2. पर्यावरण प्रबंधन के इथिकल (नैतिक) पहलू पर प्रकाश डालिए।
3. पर्यावरणीय प्रबंधन के आर्थिक पक्ष को कौन–कौन से तत्व प्रभावित करते हैं? समझाइए।
4. जल एक्ट क्यों बनाया गया है? जल एक्ट में राज्य बोर्ड के कार्य एवं शक्तियों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

पर्यावरण प्रबन्धन के उपगमन (एप्रोचेस)

पाठ्यक्रम–

आर्थिक नीतियॉं, पर्यावरण सूचक, मानकों (स्टैण्डर्स) की सेटिंग, सूचनाओं का आदान–प्रदान एवं निगरानी।

(1) आर्थिक नीतियॉं

(Economic Policies)

सरकारों ने आर्थिक विकास के लिए आर्थिक कार्यक्रमों में प्रत्यक्ष सहयोग देना प्रारंभ कर दिया है अर्थात अनेक कार्यक्रम स्वयं सरकार ही चला रही है। इनके सफल क्रियान्वयन के लिए सरकार द्वारा आर्थिक नीतियॉं बनायी गयी हैं। सरकार का उद्देश्य उपलब्ध प्राकृतिक एवं मानवीय साधनों का पूर्ण उपयोग कर जनता के जीवन स्तर को उन्नत करना है और यह भी ध्यान रखना है कि जनता को आवश्यक वस्तुऍं उचित मूल्य पर, पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो, उत्पादन बढ़े, लेकिन आर्थिक विषमता घटे, रोजगार के अवसर बढ़े, जनता को न्याय मिले व उसका शोषण न हो। आर्थिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण होना चाहिए। दीर्घकालीन विकास का ध्यान भी रखना होता है। राष्ट्र के आर्थिक विकास करने के लिए सरकार को आर्थिक नीतियां निर्धारित करनी पड़ती है और उनके पालन हेतु आवश्यक नियंत्रणों की भी व्यवस्था करनी होती है।

अर्थ एवं परिभाषा (Meaning &Definition):-

आर्थिक विकास को गति देने के लिए वैज्ञानिक तरीके प्रयुक्त किये जा रहे हैं। राज्य को अपने महत्वपूर्ण निर्णयों को क्रियान्वित करने के लिए प्रशासनिक अधिकारियों एवं राज्य कर्मचारियों पर निर्भर रहना पड़ता है। लेकिन सरकारी तंत्र किस आधार पर कार्य करे और उसके मार्गदर्शक तत्व क्या हो, यह निश्चित करना पड़ता है। अतः राज्य द्वारा निर्धारित उद्देश्यों, विचारों तथा निर्देशों को कुछ संक्षिप्त एवं स्पष्ट मार्गदर्शक सूत्रों एवं कार्य सिद्धान्तों में परिवर्तित करना आवश्यक हो जाता हैं इन मार्गदर्शक सूत्रों या सिद्धान्तों को नीतियां कहते हैं। इस प्रकार राज्य द्वारा आर्थिक क्रियाओं के संचालन के लिए अपनाए जाने वाले सिद्धान्तों तथा विचारों को आर्थिक नीतियॉं कह सकते हैं। राज्य अपने द्वारा आर्थिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए आर्थिक नीतियों को साधन के रूप में प्रयुक्त करता है। प्रशासन तंत्र इन आर्थिक नीतियों के आधार पर आर्थिक गतिविधियों को सही दिशा देता है और निर्णय लेता है।

आर्थिक नियोजन में सबसे पहले उद्देश्य निर्धारित किये जाते हैं। आर्थिक नीतियॉ इन उद्देश्य को प्राप्त करने का साधन है। इसलिए नियोजन के उद्देश्य निर्धारित करने के बाद आर्थिक नीतियों का निर्धारण किया जाता है। ये नीतियां ही योजना को क्रियान्वित करने वाले तंत्र का मार्गदर्शन करती है। आर्थिक नीतियॉ उस क्षेत्र की सीमा निर्धारित कर देती हैं, जिस पर निर्णय लेना है और ये इस बात का भी निश्चय करती हैं कि निर्णय उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक हो।

नीतियों की विशेषताएं (Characteristics of policies)

नीतियों की निम्नलिखित प्रमुख विशेषताएँ होती हैं –

(1) निरंतर चलने वाले दिशा निर्देश (Continuing Directive Guidelines):-

नीतियॉ ऐसे निर्णय निर्देश होती हैं जो एक बार निश्चित करने के बाद सदैव दिशा निर्देश देती रहती हैं। समय–समय पर परिस्थितियों के अनुसार इनके दिशा निर्देश मिलते रहते हैं।

(2) निर्णय सीमा की व्याख्या (Definition of Decision Limit):-

नीतियॉ प्रबन्धकों की निर्णय लेने की शक्ति को समाप्त नहीं करती बल्कि उस सीमा का निर्देशन करती है, जिस सीमा तक प्रबन्धकों को निर्णय लेने का अधिकार दिया गया है।

(3) नीतियॉ उद्देश्यों से भिन्न हैं (Policies are different from objectives)-

उद्देश्य हमारी योजना की वह मंजिल है जहॉ हमें पहुॅचना है और नीतियॉ वे साधन या सविधियां हैं जिनके द्वारा मंजिल तक पहुॅच सकते हैं। इस प्रकार उद्देश्य योजना के लक्ष्यों की व्याख्या करते हैं और नीतियॉ उन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु मार्ग–दर्शन देती हैं।

(4) नीतियॉ नियम नहीं है (Policies are not Rules) -

नीतियॉ किसी विचार पर आधारित एक निर्णय–निर्देश देती हैं। लेकिन निश्चित सीमा में अधिकारियों को अपनी परिस्थितियों के अनुसार निर्णय लेकर उद्देश्य की प्राप्ति का प्रयत्न करना है, किन्तु नियम का पालन करना अनिवार्य है। नियमों का पालन नहीं करने पर दण्ड भी दिया जा सकता है।

आर्थिक नीति (Economic policy)

आर्थिक नीति का तात्पर्य किसी देश की सरकार द्वारा अपनाई गई उस नीति से है जो अर्थव्यवस्था के प्रबन्ध नियमन एवं नियंत्रण को सरल बनाती है ताकि आर्थिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये आर्थिक नीति निर्धारित करते हैं। नीति में अनुकूल क्रियाओं को प्रोत्साहित किया जाता है। जबकि प्रतिकूल क्रियाओं को नियंत्रित किया जाता है। इस प्रकार आर्थिक नीति एक ऐसी क्रियाओं को प्रोत्साहित करने तथा प्रतिकूल आर्थिक क्रियाओं को नियमित एवं नियंत्रित करने की व्यवस्था होती है।

आर्थिक नियोजन में सरकार सर्वप्रथम उद्देश्य निर्धारित करती है। इनकी प्राप्ति के लिये आर्थिक नीतियॉं निर्धारित की जाती हैं। प्रशासनिक अधिकारी आर्थिक क्रियाओं के संचालन में आर्थिक नीतियों द्वारा मार्गदर्शन प्राप्त करते हैं । इस प्रकार आर्थिक नीति का तात्पर्य आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये अपनायी जाने वाली कार्य–विधि से है। आर्थिक कियाओं में मुख्य रूप से उत्पादन, आय व सम्पत्ति का वितरण, वस्तुओं का प्रयोग, प्राकृतिक व मानवीय साधनों का प्रयोग, विनिमय (आयात–निर्यात) तथा सामाजिक कल्याण में वृद्धि को सम्मिलित किया जाता है। आर्थिक नियोजन के उद्देश्य भिन्न–भिन्न हो सकते हैं। उद्देश्यों के अनुरूप ही आर्थिक नीतियां निर्मित की जाती हैं। प्रजातांत्रिक देशों में आर्थिक नियोजन का उद्देश्य अधिकतम जन कल्याण होता है। अतः अधिकतम जन कल्याण के लिये ही आर्थिक नीतियां बनायी जाती हैं।

आर्थिक नीतियॉं सामाजिक एवं राजनीतिक नीतियों से भी प्रभावित होती हैं। अतः आर्थिक नीति, सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना, जनता का जीवन स्तर उन्नत करना, राजनीतिक स्थिरता बनाये रखना व शांति व्यवस्था बनाये रखने के प्रतिकूल नहीं होनी चाहिए । जैसे यदि सामाजिक समानता व न्याय चाहिये तो आर्थिक सत्ता के केन्द्रीकरण को समाप्त करने वाली होनी चाहिए । अतः आर्थिक नीति दूसरे में विरोधी लक्ष्यों के मध्य समन्वय आवश्यक है। कभी यह भी संभव हो सकता है कि एक आर्थिक नीति दूसरे लक्ष्य की विरोधी हो जैसे हम तीव्र विकास की नीति अपनाते हैं। किन्तु साथ ही कीमतों में स्थिरता भी चाहते हैं जबकि तीव्र विकास के साथ मूल्य वृद्धि आवश्यक है। अतः आर्थिक नीति में विरोधी लक्ष्यों में समन्वय आवश्यक है।

आर्थिक नीति के उद्देश्य (Objectives of economic policy) -

सरकार की आर्थिक नीति के अनेक उद्देश्य हो सकते हैं। कुछ उद्देश्य एक दूसरे के सहायक व कुछ परस्पर विरोधी हो सकते हैं । उद्देश्य निर्धारण के समय तात्कालिक आवश्यकताओं एवं दीर्घकालीन दृष्टिकोण को ध्यान में रखा जाता है। भारतीय अर्थव्यवस्था वादी आर्थिक नीति के निम्नलिखित उद्देश्य हो सकते है –

1. रोजगार की प्राप्ति–विकासशील देशों में आर्थिक नीति का प्रमुख उद्देश्य रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना होता है, जिससे जन शक्ति का आर्थिक विकास में पूर्ण उपयोग हो सके । भारत में बेरोजगारी निरन्तर बढ़ रही है, इसका अर्थ है कि रोजगार की दिशा में कोई ठोस योजना नहीं बनी और न ही ऐसी नीतियॉं लागू हुई हैं। आर्थिक नीति ऐसी होनी चाहिये कि यह बेरोजगारी दूर करने व रोजगार के अवसर बढ़ाने में सहायक हो ।

2. तीव्र आर्थिक विकास–आर्थिक नीतियों को तीव्र आर्थिक विकास में सहायक होना चाहिये और साथ में इनमें संतुलित आर्थिक विकास को भी प्रोत्साहन मिलना चाहिये । इससे आर्थिक विकास के साथ समानता को बढ़ावा मिलता है। आर्थिक नीतियों में उपलब्ध साधनों का अनुकूलतम उपयोग करके अर्थ तंत्र को उचित दिशा दी जाती है। सीमित साधन है, अतः प्राथमिकताओं का निर्धारण कर अधिक महत्व की परियोजनाओं को पहले पूरा किया जाता है। विकास की उच्च दर द्वारा जनता के जीवन स्तर को उन्नत कर सकते हैं।

3. आर्थिक स्थायित्व–आर्थिक नीति में व्यापार चक्रों के कारण तेजी मंदी अथवा मूल्यों में उतार–चढ़ाव को नियंत्रित करना होता है। आर्थिक नीतियों द्वारा उत्पादन व उपभोग, वितरण व मॉग में ऐसा समन्वय किया जाता है।

4. अधिकतम सामाजिक कल्याण–आर्थिक नीतियों में आय व सम्पत्ति का गरीब व्यक्तियों के पक्ष में वितरण होना चाहिये। इसके लिये प्रगतिशील कर नीति अपनायी जाती है तथा गरीब वर्ग को आय उपलब्ध करवायी जाती है। धनवान व्यक्ति से धन लेकर गरीबों में वितरित करने से ही अधिकतम सामाजिक कल्याण हो सकता है।

5. आर्थिक समानता एवं न्याय–आर्थिक नीति का उद्देश्य आर्थिक विकास के साथ विकास के लाभों का न्यायोचित वितरण करना भी है, जिससे समाज में सम्पत्ति, आय व अवसरों की समानता बढ़े । समाज में व्याप्त आर्थिक असमानता, अन्याय व शोषण को दूर किया जा सके । आर्थिक विकास के साथ समाज के कमजोर वर्ग को सामाजिक व राजनीतिक न्याय मिलना भी आवश्यक है। इस हेतु आर्थिक नीति में रोजगार के समान अवसर, समान काम के लिये समान वेतन व न्यूनतम मजदूरी का प्रावधान होना जरूरी है।

6. आर्थिक स्वतंत्रता–प्रत्येक व्यक्ति को जनहित के किसी भी प्रकार के व्यवसाय को अपनाने की स्वतंत्रता को आर्थिक स्वतंत्रता कहते हैं। सरकार द्वारा प्रत्येक नागरिक को व्यवसाय करने की पर्याप्त सुविधा उपलब्ध करायी जानी चाहिये ।

7. उत्पादन में वृद्धि–आर्थिक नीति का उद्देश्य राष्ट्र में उत्पादन वृद्धि को प्रोत्साहित करना है। कृषि मूल्य नीति में किसानों को उनकी उपज का उचित मूल्य मिलने का प्रावधान होना चाहिये । जिससे वे अधिक उत्पादन के लिये प्रोत्साहित हो। औद्योगिक नीति ऐसी हो कि देश का विकास तीव्र हो, उत्पादन बढ़े और जनता को उपभोग की वस्तुऍ उपलब्ध हो। वाणिज्य नीति ऐसी हो कि निर्यात बढ़े और आयात सीमित होने में सहायता मिले।

8. नियोजित विकास को प्रोत्साहन–आर्थिक विकास नियोजित होने से संतुलित विकास होना व निश्चित उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकेगा ।

9. निर्यात वृद्धि–इसके द्वारा भुगतान असाम्यता को दूर किया जा सकता है।

10. सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र के मध्य समन्वय–भारत की आर्थिक नीति में दोनों क्षेत्रों को उचित महत्व दिया गया है। निजी क्षेत्र के लिये उदारीकरण एवं निजीकरण की नीति पर बल दिया जा रहा है। इससे आर्थिक विकास में दोनों क्षेत्रों का सहयोग मिलेगा। इसके लिये भारत सरकार के औद्योगिक नीति, राजकोषीय एवं मौद्रिक नीति में व्यापक परिवर्तन किये हैं।

आर्थिक नीति के उपकरण

(Instruments of economic policy)

वास्तव में अविकसित एवं विकासशील देशों की समस्याएं विकसित देशों की समस्याओं से अधिक जटिल एवं ज्वलन्त होती है। समस्याओं के हल हेतु उनके अनुरूप ही प्रत्येक देश आर्थिक नीति अपनाता है। आर्थिक नीतियों के सफल क्रियान्वयन के लिये कुछ उपकरणों की आवश्यकता होती है। उपकरणों का चयन व प्रयोग उचित होना चाहिये, जिससे आर्थिक नीति सफल हो सके।

आर्थिक नीति के निम्नलिखित उपकरणों पर विचार करते हैं :–

(1) मौद्रिक उपकरण–मौद्रिक उपकरण वे होते है जो देश की अर्थव्यवस्था में मुद्रा व साख के मात्रा को प्रभावित करते है। इनसे आर्थिक उच्चावयों को अपेक्षित दिशा मिलती है। इन उपकरणों में मुद्रा के नियमन व नियंत्रण में प्रयुक्त की जाने वाली सभी प्रणालियां सम्मिलित है। इनकाा प्रयोग देश के केन्द्रीय बैंक की सहायता से किया जाता है। ये उपकरण विनिमय दर से स्थिरता बनाये रखना, मृदा एवं साख की मात्रा को नियंत्रित करना मूल्य स्तर में स्थायित्व पूर्ण रोजगार, बैंकिग विकास, स्थायित्व के साथ आर्थिक विकास, उचित ब्याज दर, पूंजी निर्माण या विनियोग को प्रोत्साहन आदि के लिए प्रयुक्त किये जाते है। प्रमुख मौद्रिक उपकरण निम्नलिखित है –

1. साख नियंत्रण–साख नियंत्रण से आशय साख का सृजन करने वाली मौद्रिक एवं वित्तीय संस्थाओं की साख सृजन क्षमता को इस प्रकार नियंत्रित करने से है। जिससे साख की कुल पूर्ति किया जा सके । साख नियंत्रण का मुख्य उद्देश्य आर्थिक उच्चावचनों को नियंत्रित कर आर्थिक नियोजन को सफल बनाना है। केन्द्रीय बैंक साख नियंत्रण द्वारा मौद्रिक व्यवस्था का संचालन करती है।साख नियंत्रण की निम्न दो रीतियां हैं –

(अ) परिमाणात्मक रीतियॉं–इन रीतियों से साख की मात्रा व लागत पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। जैसे बैंक दर, खुले बाजार की क्रियाएं नकद कोषानुपात में परिर्वतन, तरल कोषानुपात में परिवर्तन आदि।

(ब) गुणात्मक रीतियॉं–ये साख के प्रयोग व व्यवहार को नियंत्रित करती हैं। इनमें चयनित साख नियंत्रण, साख का समभाजन, प्रचार, नैतिक अनुनय, प्रत्यक्ष कार्यवाही आदि शामिल हैं।

2. विनिमय दर–वह दर जिस पर एक देश की करेंसी, दूसरे देश की करेंसी में बदली जाती है, विनिमय दर कहलाती है। देश की मौद्रिक नीति का एक उद्देश्य विनिमय दर में स्थिरता बनाये रखना है। विनिमय दर में स्थायित्व का अर्थ है कि देश की मुद्रा का बाह्य मूल्य स्थिर बना रहे विनिमय दर में स्थिरता से उद्योग, व्यापार, रोजगार का विकास होता है व अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ावा मिलता है।

3. ब्याज दर–ब्याज दर देश में बचत, विनियोग एवं पूंजी निर्माण को प्रभावित करती है। सरकार ब्याज दर के माध्यम से बचत व विनियोग की दिशा निर्धारित करती है। सरकार द्वारा सस्ती ब्याज दर पर पर्याप्त ऋण

उपलब्ध कराने पर विनियोग बढ़ जाता है। जिन जमाओं पर ऊँची ब्याज दर निर्धारित करती है। इनके माध्यम से सरकार अपनी योजनाओं को लागू करती है।

4. बैंकिंग विकास—बैंक ऋण देने के साथ बचत को प्रोत्साहित करती है और तकनीकी सलाह भी देती है। बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद सरकार ही रिजर्व बैंक के माध्यम से इनकी ऋण, साख एवं विस्तार नीति निर्धारित करती है। इनके माध्यम से सरकार अपनी योजनाओं को लागू करती है।

5. बचतों को प्रोत्साहन—मौद्रिक उपकरणों के माध्यम से सरकार बचतों को प्रोत्साहित करती है। बैंकिग विकास के माध्यम से समाज की अतिरिक्त आय को बचत एवं विनियोग के लिये प्रोत्साहित कर सकती है। ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिग सुविधाओं का विकास कर छोटी–छोटी बचतों को एकत्रित करने का प्रयास किया जाता है। इससे सरकार को विकास के लिये पर्याप्त वित्त मिल जाता है।

(2) राजकोषीय उपकरण—सरकार की विकास के लिये वित्त जुटाने एवं उसे उचित ढंग से व्यय करने की क्रियाएँ राजकोषीय नीति का अंग है। सरकार की राजकोषीय नीति के निम्नलिखित उपकरण है –

1. सार्वजनिक आय—सरकार को वित्त की आवश्यकता पड़ती है। यह वित्त करारोपण, सार्वजनिक उपक्रमों की आय आदि से प्राप्त किया जाता है। कर सार्वजनिक अधिकारियों द्वारा वसूल किया जाने वाला अनिवार्य भुगतान है। कर सार्वजनिक आय का मुख्य साधन है।

2. सार्वजनिक ऋण—सरकार अपने विकास व्ययों को पूर्ति के लिये सार्वजनिक ऋण लेती है। वर्तमान में सरकार केवल असामान्य परिस्थितियों के लिये ही नहीं बल्कि नियमित आय–व्यय के घाटे को पूरा करने के लिये भी ऋण लेती है।

3. हीनार्थ प्रबंधन—जब सरकार के व्यय उसकी आय से अधिक हो और वह उस घाटे को अन्य साधनों से पूरा न कर सके तो वह अतिरिक्त नोट छापकर घाटे की पूर्ति करती है, इसे हीनार्थ प्रबन्धन कहते हैं। विकासशील देशों में हीनार्थ प्रबन्धन आवश्यक हो गया है।

(3) वाणिज्यिक उपकरण—आर्थिक नीति में व्यापारिक उपकरणों का महत्व निम्न बिन्दुओं से स्पष्ट होता है –

1. मुक्त एवं प्रतिबन्धित व्यापार—वर्ष 1995 से पूर्व अधिकांश देशों ने प्रतिबंधित व्यापार नीति अपना रखी थी । इस नीति में व्यापार पर अनेक प्रतिबंध लगाये जाते हैं। 1 जनवरी 1995 से विश्व व्यापार संगठन ने कार्य प्रारंभ किया और स्वतंत्र व्यापार नीति को बढ़ावा दिया । आज अधिकांश देशों ने इसकी सदस्यता ग्रहण कर ली है।

2. राष्ट्रानुसार प्राथमिकताएँ—आर्थिक नीति की सफलता के लिये व्यापारिक नियंत्रण लगाये जाते है। कुछ देशों से व्यापार पर कठोर प्रतिबंध लगाये जाते हैं। सरकार विभिन्न देशों से भिन्न निम्न शर्तें निर्धारित करती हैं। यह भी तय किया जाता है कि किन वस्तुओं को आयात–निर्यात में प्राथमिकता दी जाये।

3. वस्तु के अनुसार प्राथमिकता–व्यापार नीति के द्वारा वस्तु की मॉग एवं पूर्ति में समायोजन किया जाता है। यह निश्चित करना होता है कि किन वस्तुओं को आयात–निर्यात में प्राथमिकता दी जाये।

नियंत्रण (Controls)

आर्थिक क्रियाओं को स्वेच्छा से न चलने देकर निश्चित दिशा में संचालित करना, आर्थिक नियंत्रण कहलाता है। आर्थिक नीति की सफलता हेतु नियंत्रण लगाये जाते हैं –

1. मूल्य नियंत्रण–आर्थिक कार्यक्रमों की सफलता के लिये मूल्य वृद्धि पर नियंत्रण लगाना जरूरी है। इससे उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा होती है।

2. विनियोग पर नियंत्रण–सरकार विनियोग नियंत्रण द्वारा आर्थिक सत्ता के केन्द्रीकरण व असंतुलित विकास को रोकती है एवं विशिष्ट उद्योगों की विशिष्ट स्थानों पर स्थापना व विकास करती है, इससे विकेन्द्रीकरण को बढ़ावा मिलता है और औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े क्षेत्रों का विकास होता है।

3. लाइसेन्स व्यवस्था–इसके द्वारा वस्तुओं के उत्पादन, आयात–निर्यात, साधनों की लागत तथा पद्धति पर नियंत्रण रखा जाता है। निजी एवं सार्वजनिक उपक्रमों के उत्पादन क्षेत्र निर्धारित किये जाते हैं तथा उनमें अनावश्यक प्रतिस्पर्धा को रोका जाता है। उत्पादन की मात्रा को नियंत्रित कर वस्तु की मॉग एवं पूर्ति में संतुलन बनाया जाता है।

4. सार्वजनिक वितरण प्रणाली–इसके अंतर्गत आवश्यक एवं सीमित पूर्ति वाली उपभोग की वस्तुओं की सरकारी वितरण व्यवस्था आती है। उपभोक्ताओं को उचित मूल्य पर आवश्यक वस्तुऍ उपलब्ध करवायी जाती हैं।

आर्थिक सहायता (Economic subsidies) -

इसके अंतर्गत सरकार आर्थिक सहायता देकर ऐसी वस्तुओं के उत्पादकों को कम लागत पर उत्पादित करने में सहायता देती है जिन वस्तुओं का उत्पादन सामाजिक हित में होता है। आर्थिक सहायता के अनेक प्रकार हैं–

1. कृषि क्षेत्र को आर्थिक सहायता–यह सब्सिडी सिंचाई, बीज, उर्वरक, कीटनाशक, कृषि, उपकरण, डीजल एवं किसानों की बिजली आपूर्ति इत्यादि पर दी जाती है।

2. निर्यात आर्थिक सहायता–यह सहायता समूह मुफ्त अनुदानित परिवहन सुविधा अथवा करों में रियायत के रूप में दी जाती है।

3. उपभोक्ताओं को आर्थिक सहायता–इसके अंतर्गत उपभोक्ताओं को खाद्य पदार्थों पर आर्थिक सहायता, कपड़े, ईंधन गैस, केरोसीन व रसोई गैस, घरेलू रोशनी आदि पर दी जाने वाली आर्थिक सहायता आती है।

आर्थिक नीति के घटक

(Components of economic policy)

सामान्य रूप से आर्थिक नीति के निम्नांकित घटक होते हैं–

1. कृषि नीति–कृषि नीति में कृषि की प्रमुख प्रणाली, भू–स्वामित्व, तकनीक, विनियोग, कृषि उत्पादन की मात्रा, कृषि वस्तुओं के मूल्य, सरकार की न्यूनतम मूल्य नीति, भण्डारण व्यवस्था, विपणन व्यवस्था, बीज, खाद, कीटनाशक दवाईयों की उपलब्धि, कृषि यंत्रीकरण आदि अनेक बातें सम्मिलित हैं। पूँजीवादी आर्थिक प्रणाली में सरकार कृषि विकास के लिए आवश्यक आदानों की व्यवस्था करती है किन्तु किसान फसल के चुनाव, उत्पादन, विक्रय, वित्त प्रबंध के लिए स्वतंत्र है। समाजवादी आर्थिक प्रणाली में समस्त निर्णय सरकार द्वारा लिये जाते हैं। भारत में सरकार केवल कृषि उपजों का मूल्य निर्धारण, कृषि उत्पादों की बिक्री तथा आवश्यक कृषि आदानों की उचित मूल्य पर पूर्ति आदि के संबंध में नीति निर्धारित करती है।

2. औद्योगिक नीति–इसके अंतर्गत सरकार औद्योगिक विकास को नियमित एवं नियंत्रित करने के उपाय घोषित करते हैं। इसमें देश के औद्योगिक विकास को प्रभावित करने वाले सभी सरकारी सिद्धांत, नियम, वित्त प्रबंध, विकास आदि से संबंधित व्यवस्थाएँ निश्चित करती हैं।

3. व्यापारिक नीति–इस नीति में मुख्य रूप से आयात–निर्यात नीतियाँ, विदेशी व्यापार की दिशा एवं स्वभाव, स्वदेशी उद्योगों को संरक्षण, विदेशी ऋण व सहायता, व्यापार समझौते, भुगतान संतुलन आदि बातें शामिल हैं। विकासशील देशों में आयात सीमित कर निर्यात बढ़ाने का प्रयास रहता है। देश को स्वावलम्बी बनाने का प्रयास रहता है।

4. राजकोषीय नीति–यह नीति ऋण एवं व्यय के वितरण, कर, सार्वजनिक आय, अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के लिए वित्तीय साधन उपलब्ध कराने तथा अर्थव्यवस्था को सुव्यवस्थित करने में सहायक होती है। इसका राष्ट्रीय बचत, विनियोग, पूँजी निर्माण, वित्त व्यवस्था आदि से प्रत्यक्ष संबंध है।

5. मौद्रिक नीति–किसी देश की सरकार अथवा केन्द्रीय बैंक द्वारा अर्थव्यवस्था में किसी विशेष आर्थिक उद्देश्य की प्राप्ति के लिए (जैसे मूल्य स्थिरता, विनिमय दर में स्थिरता, पूर्ण रोजगार, आर्थिक विकास) संचालन में मुद्रा एवं साख की मात्रा के प्रसार तथा संकुचन के प्रबंध को मौद्रिक नीति कहा जाता है। मौद्रिक नीति बेरोजगारी, आर्थिक अनिश्चितता, मूल्य वृद्धि, निर्धनता, बाजार की अपूर्णता, विनियोग एवं बचत की कमी, आर्थिक उच्चवचन, मुद्रा –स्फीति के कारण मूल्यों में वृद्धि व भुगतान असाम्यता जैसी समस्याओं को हल करने में सहयोग प्रदान करती है।

6. मूल्य नीति–विकासशील देशों में विकास की प्रारंभिक अवस्था में आधारभूत एवं बड़े उद्योगों एवं सामाजिक सेवाओं पर भारी व्यय किया जाता है। इन उद्योगों की निर्माण अवधि लम्बी होती है, जिससे इन पर किया गया व्यय तो आय के रूप में समाज तक पहुँच जाता है, किन्तु इनमें उत्पादन प्रारंभ नहीं होती है। आय बढ़ने

से वस्तुओं की मॉग बढ़ जाती है लेकिन पूर्ति देरी से बढ़ती है जिससे मूल्य वृद्धि हो जाती है। आदमी का जीना कठिन हो जाता है। अतः मूल्य नीति घोषित की जाती है। इसके अंतर्गत वस्तुओं के अधिकतम मूल्य निर्धारित किये जाते हैं। कुछ वस्तुऍ सरकार द्वारा उचित मूल्य पर उपलब्ध करवायी जाती हैं।

7. मजदूर नीति–श्रमिक से अन्य साधनों के समान व्यवहार नहीं किया जा सकता है क्योंकि श्रमिक में भावनाऍ होती है वह आर्थिक व्यवस्था के साथ सामाजिक व्यवस्था को भी प्रभावित करता है। अतः मजदूर नीति बनाने में आर्थिक दृष्टिकोण के साथ सामाजिक, नैतिक, राजनीतिक पक्षों का भी ध्यान रखना होता है। मजदूर नीति समाज में मजदूरों की प्रतिष्ठा, उनके जीवन स्तर, उनकी समाज के प्रति वचनबद्धता, उत्पादकता, मनोबल, उत्प्रेरणा, सामाजिक व्यवस्था, मूल्य स्तर, आर्थिक समानता, न्याय आदि को प्रभावित करती है। यदि नीति से श्रमिक संतोष अनुभव करते हैं तो राष्ट्रीय उत्पादन, आय एवं श्रम उत्पादकता में वृद्धि होगी। यदि श्रमिक असंतोष अनुभव करता है तो आर्थिक व सामाजिक प्रभाव भयानक होंगे।

आर्थिक नीति की सफलता के लिए आवश्यक है कि इसके विभिन्न संघटकों का निर्माण करते समय समग्र उद्देश्य को सामने रखा जाये ताकि विभिन्न घटकों में प्रतिस्पर्धा एवं टकराव न होकर समन्वय रह सके। नीतियों के निर्माण के साथ इनका ईमानदारी एवं निष्ठा से पालन करना और समय–समय पर मूल्यांकन करना भी आवश्यक है ताकि बाधक तत्वों का पता करके उन्हें हटाया जा सके।

पर्यावरण सूचक

(Environment Indicators)

पारिस्थितिकी (Ecology) पर प्रदूषण दबाव के प्रभाव को ज्ञात करने में जैविक विविधता (Biological diversity) डोमिनेन्स विश्लेषण और उस स्थान पर आने वाले पौधे बहुत उपयोगी हैं।

प्रत्येक जीवधारी व पादप जिन शर्तों के अंदर बड़े होते हैं, वे उनके उत्पाद हैं। अतः जीवधारी व पादप, पर्यावरण के माप हैं। प्रत्येक जाति को क्रिया करने के लिए पर्यावरणीय शर्तों की आवश्यकता होती है किसी भी स्थान पर उगने वाले पौधे व पाये जाने वाले जीवधारी एवं पारिस्थितिक कारकों के बीच पूर्ण संबंध होता है। विभिन्न जातियों की पारिस्थितिकी संबंधी आवश्यकताऍ भिन्न होती हैं तथा प्रत्येक जाति उसी स्थान पर स्थाई हो सकेगी और पूर्ण विकसित होगी। इसलिए वनस्पति व जन्तु का प्रारूप और उसकी जातियां किसी आवास के सभी संघठित प्रभाव के सूचक होते हैं।

परिवर्तन को मोनिटर करने हेतु पिछले कुछ वर्षों से सूचकों के उपयोग के प्रति रूचि और कार्य बढ़ा है। नीति के लिए उपयोगी सूचकों के विकास की जरूरत है। अच्छे सूचक प्रायोगिक नीति के लिए पर्यावरणीय शर्तों के मापक हैं। सूचकों द्वारा यह अंदाज हो जाता है कि किस स्थान पर किस प्रकार का विकास संभव है। इस प्रकार देश के विकास में पर्यावरणीय सूचक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

हम यहॉ पर विभिन्न प्रकार के पर्यावरणीय सूचकों का वर्णन करने जा रहे हैं।

जैविक सूचक

(Bio Indicators)

पौधे वायु प्रदूषण से प्रभावित होते हैं। वायु प्रदूषण के कारण सूर्य के प्रकाश की मात्रा में कमी आती है, जिससे पौधों की प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। प्रदूषित पदार्थ पत्तियों पर एकत्रित होकर पर्ण रन्ध्रों को अवरूद्ध कर देते हैं। जिसके फलस्वरूप वाष्पोत्सर्जन की क्रिया मन्द हो जाती है।

वायु प्रदूषण वाले क्षेत्रों के वर्षा जल में विभिन्न गैंसे तथा विषैले पदार्थ घुलकर धरती पर आ जाते हैं तथा जड़ों द्वारा ग्रहण होकर पौधों के शरीर में पहुॅच जाते हैं, जिससे बहुत से हरे–भरे पौधे नष्ट हो जाते हैं।

पौधे और जीव प्रदूषण के जैविक सूचक कहलाते हैं। पौधे सूचक जातियों की धारणा पशुसूचक जातियों से बहुत पुरानी है।

यहाँ पर विभिन्न जैविक सूचकों पर प्रदूषक पदार्थ के प्रभाव का वर्णन कर रहे हैं –

1. तम्बाकू, टमाटर, मटर, चीड़ (जैविक सूचक) पर प्रभाव –इन पौधे की पत्तियों के खंभ उतक (Pallisade tissue) को हानि होती है। ये ऊतक जल उन्मुक्त करने लगते हैं तथा नष्ट हो जाते हैं।

यह इस बात का सूचक है कि वायु में ओजोन की मात्रा मानक मान 0.02 पीपीएन से अधिक है।

2. साल्विया, डहलिया तथा चीड़ पर प्रभाव–पत्तियों की उपरी सतह पर लाल व भूरी धारियॉ या सफेद चकते, अधिक मात्रा में, प्रदूषण होने की स्थिति में पत्तियों का किनारे से मुड़ जाना या फट जाना, चीड़ की पत्तियों की नोक के ऊपरी भाग का जल जाना। यह इसका सूचक है कि वायु में ओजोन की मात्रा मानक मान से अधिक है।

3. बरगद, जीनिया तथा चीड़ पर प्रभाव–पत्तियों की शिराओं और किनारे के मध्य हल्के चकते तथा उसके पास के उतकों का मृत हो जाना।

यह प्रभाव सूचना देता है कि वायु में सल्फर डाई ऑक्साइड की मात्रा स्टेण्डर्ड मान से अधिक है।

4. पत्तियों पर प्रभाव–नव अंकुरित पत्तियॉ व ऊतक का क्षय होना, इनका काले पड़ जाना। इसका द्योतक है कि SO_2 की मात्रा वायु में अधिक है।

5. संगमरमर भवन (जैसे ताजमहल) पर प्रभाव–धवलता नष्ट होना यह दर्शाता है कि वायु SO_2 की अधिक मात्रा द्वारा प्रदूषित है।

6. ग्लेड्यूलस और चीड़ पर प्रभाव–पत्तियों की उपरी नोक व किनारे के ऊतकों का मृत हो जाना। इसका संकेत करता है कि वायु में हाइड्रोजन फ्लोराइड की मात्रा अधिक है।

7. ऑक का प्रभाव–बाह्य दल सूख जाते हैं अर्थात वायु में एथिलीन अधिक मात्रा में उपस्थित है।

8. पालक, तम्बाकू, अल्फा पर प्रभाव–पौधों का रंग उड़ जाता है। यह इस ओर संकेत करता है कि वायुमंडल में ऑक्सीकारक धूम अधिक है।

9. आम पर प्रभाव–औद्योगिक क्षेत्रों के निकट क्षेत्रों में पत्तियों का ऊतक क्षय, पत्तियों का समय पूर्व झड़ना, कलियों का मुर्झाना तथा फल के छोटे आकार का होना। इन प्रभावों का संकेत वायु में SO_2 की अधिकता है।

10. सदाबहार पौधों पर प्रभाव–सल्फर डाईऑक्साइड युक्त ओस तथा कोहरे से सर्वाधिक नुकसान होता है। वर्षा ऋतु में वातावरण में उपस्थिति SO_2 जल के साथ निक्षालित होकर सल्फ्यूरस अम्ल के रूप में जमीन पर आ जाती हैं यहां सल्फ्यूरस अम्ल वायु द्वारा ऑक्सीकृत होकर सल्फ्यूरिक अम्ल में बदल जाता है, जिससे मृदा की अम्लीयता में (4pH) तक की वृद्धि हो जाती है। इससे पौधों में भोज्य पदार्थों से कैल्शियम इत्यादि आयनों की हानि हो जाती है।

11. लाइकेन तथा मास पर प्रभाव–इन पौधों की मन्द गति से वृद्धि करने तथा अधिक समय तक जीवित रहने और पर्यावरण के प्रदूषण तत्वों को अपने शरीर में संचित करने की योग्यता के कारण इन पौधों का उपयोग सल्फर डाइऑक्साइड जैसे विषैली गैसों के वायु में जैव आयापन हेतु किया जाता है।

यथार्थ में लाइकेन्स विशेषकर विषैली गैसों, फ्लोराइड, भारी धातुओं, रेडियो न्यूक्लाइड, कृषि रसायनों तथा जैव नाशकों के प्रति बहुत अधिक संवेदनशील होते हैं। इंग्लैण्ड के कुछ स्थान जो पूर्व में लाइकेन्स की विभिन्न जातियों से परिपूर्ण थे, बढ़ते हुए औद्योगीकरण के साथ लाइकेन्स मरूस्थलों में परिवर्तित हो गये हैं, क्योंकि लाइकेन्स की अधिकांश जातियों का बड़े शहरों में औद्योगिक तथा अन्य कारणों से बड़े प्रदूषण के कारण उन्मूलन हो गया है। उदाहरण के लिए 'इपिंग वन' में एक शतक पूर्व लाइकेन्स की लगभग 120 जातियां पायी जाती है। वहॉ अब केवल 30 जातियॉ ही पायी जाती हैं।

12. कैलोट्रोपिस, आर्जेमोनमेक्सिकाना, अगेव व केक्टाई आदि पौधे जलवायु व मृदा की दृष्टि से अर्ध मरूस्थलीय पारिस्थितियों का संकेत देते हैं।

13. धातु परिद्रावकों **(Smelters)** से निकले धुएं में कार्बन के अलावा तॉबा, जस्ता आदि धातुएँ भी पर्याप्त मात्रा में होती हैं। धातु परिद्रावक उद्योगों की अधिकता वाले कॉपर हिल्स(जोर्जिया) तथा स्वान्सी (साउथ वेल्स) स्थानों की वनस्पति विहीन पहाड़ियॉ इस बात का द्योतक है कि ये पदार्थ वनस्पतियों के लिए निश्चित रूप से हानिकारक होते हैं ।

14. कुछ कीट विशेषत– मधुमक्खी एवं शलभ तथा अनेक कीटभक्षी, स्तनपोषी कुछ विशेष प्रकार के औद्योगिक वायु प्रदूषण के कारण बड़ी संख्या में मरते हैं। कीटों की कुछ जातियों में पर्यावरण प्रदूषण के प्रभावों के प्रति अनुकूलन हेतु आधारभूत परिवर्तन भी उत्पन्न हो गये हैं। इसका एक प्रत्यक्ष उदाहरण है–ब्रिटेन तथा महाद्वीपीय यूरोप के कुछ भागों में पाये जाने वाले पीपर्ड शलभ (Peeperd-moth) की औद्योगिक अति कृष्णता

(Industrial melanism) है। इस कीट की दो जातियॉ होती हैं–एक हल्के रंग की तथा दूसरी गहरे रंग की। गहरे रंग की जाति एक शतक पूर्व बहुत ही दुर्लभ थी (ग्रामीण क्षेत्रों में जहॉ उद्योग नहीं वहॉ अभी भी दुर्लभ है), किन्तु अब औद्योगिक क्षेत्रों में बहुतायत से मिलती हैं । औद्योगिक क्षेत्रों की वायु में उपस्थिति धुएॅ तथा कोयले के कणों के कारण वृक्षों के तने काले रहते हैं। इन काले तनों पर रहने वाले काले रंग के पीपर्ड शलभ पक्षियों को सरलता से नहीं दिखते, अतः सुरक्षित रहते हैं। इसके विपरीत हल्के रंग के शलभ सुगमतापूर्वक दिखाई देते हैं और पक्षियों का भोजन बन जाते हैं।

15. पशुओं का प्रभाव–हड्डियों तथा दॉतों में फ्लुओरिसस होना, वजन घटना, लंगड़ापन आना। इससे संकेत मिलता है कि घास इत्यादि चारे पर विभिन्न फ्लोराइड यौगिकों के अवपात के कारण ये पदार्थ पशुओं के शरीर में चले जाते हैं।

16. सूचक प्रजातियॉ (Indicator species) -

1. ग्रेसेवूड (Grease wood), खारी मृदा (Saline soil) का सूचक है।
2. मॉसेस (Mosses) अक्सर अम्लीय मृदा (Acidic soil)का सूचक है।
3. टुबिफेक्स कृमि (Tubifex worms), मृदा में कम ऑक्सीजन (Oxygenpoor) का सूचक है।
4. रूका हुआ जल (Stagnant water)इस बात का सूचक है कि यह पानी पीने योग्य नहीं है।
5. प्रोसोपिस (Prosopis), पानी का स्तर गहरा है का सूचक है।

17. कुछ प्रजातियॉ पर्यावरण शर्तों के लघु परिवर्तनों के लिए बहुत संवेदनशील (Sensitive) होती हैं, जबकि कुछ अन्य अधिक सहनशील होती हैं। कई पर्यावरणीय ग्रेडियन्ट और कई प्रदूषणों के लिए इन संवेदनशील और सहनशील प्रजातियों का पता लगाना संभव है। कुछ प्रजातियों की उपस्थिति या अनुपस्थिति के आधार पर किसी क्षेत्र विशेष में प्रचलित प्रदूषण को जाना जा सकता है।

तालिका वायुमण्डल में प्रदूषण के जैविक सूचक –

संवेदनशील पौधे	सहनशील पौधे
अल्फा अल्फा	कदम्ब
आम	तुलसी
लिचर–मॉसेस	बरगद
सेव	बेर
गेहूं	अमरूद
रूई	संतरा
जौं	प्याज

18. व्यापारिक मत्स्य ग्रहण (Commercial fishing) - आधुनिक औद्योगिक धीवरकर्म में ऐसे प्रयोग किये गये जिनमें मछली की ध्वनि सुनी जाती है, लेकिन यह विधि अप्रायोगिक थी। समुद्री मछुआरों ने यह ज्ञान भी प्राप्त किया कि पर्यावरणीय शर्तों के प्रेक्षण से कहॉ मछली का पाना संभावित है। पानी का रंग और धारा की उपस्थिति या विभिन्न जल शरीरों (Water bodies) के बीच सीमा रेखा, कुछ सामान्य फिश इंडिकेटर हैं। पानी का ताप मछली को प्राप्त करने के लिए महत्वपूर्ण भौतिक गुण है। मछुआरों ने ओसीनोग्राफर्स (Oceanographors) से सर्वप्रथम थर्मामीटर के प्रयोग से मछली प्राप्त करने के साथ भविष्य में इच्छित प्रजातियों की उपब्धता को सीखा।

19. मेगालोपटेरा लार्वा (Megaloptera Larvae) -की प्रदूषित पानी की उच्च सहनशीलता के कारण यह महत्वपूर्ण पर्यावरणीय सूचक है।

20. आपेक्षिक आर्द्रता (Relative humidity) –आपेक्षिक आर्द्रता हवा में जल वाष्प की मात्रा व संतृप्त हवा में जल वाष्प की मात्रा की अनुपात है। आर्द्रता पर्यावरण की एक संयुक्त केन्द्र (Index) है।

कमरे के ताप पर सरन्ध्र पदार्थ के रंध्रों में पानी की मात्रा को आपेक्षिक आर्द्रता द्वारा ठीक प्रकार से बताया जाता है। ताप के अधिक प्रभाव के बिना लवणीय विलयनों (Salt solutions) द्वारा पानी का अवशोषण, आपेक्षिक आर्द्रता से संबंधित है।

इस प्रकार आपेक्षिक आर्द्रता को विस्तृत रूप से पर्यावरणीय सूचक के रूप में प्रयुक्त किया जाता है।

21. सूचक जीवाश्म (Fossils Indicators) -

(1) Silurian और Dvonian समुद्री चट्टानों में सोलिटरी मूंगा (Solitary corals) की विलुप्त प्रजाति जीवाश्म के रूप में प्राप्त हुई। सीसटिफाइलम (Cystiphyllum) एक हॉर्न मूंगा (Horn coral) था। अन्य मूंगों की तरह यह भी विशिष्टताऍ रखता था और इसलिए इसका जीवाश्म महत्वपूर्ण पर्यावरणीय सूचक है।

(2) पेलीओजीओग्राफी (Paleogeography) में जमीनी पौधों के जीवाश्म (Fossil land plants) को बहुत पहले से जलवायु सूचकों के रूप में प्रयुक्त किया जाता रहा है। जब आंतरिक जालीदार संरचना संरक्षित है तो यह ज्ञात करना संभव है कि पौधा सूखी या गीली जलवायु में था और ताप और वर्षा में प्रेक्षण योग्य अधिक (Marked) मौसम परिवर्तन था।

अभी–अभी नई बनी भूगर्भीय चट्टानें जो जीवाश्म रखती हैं और उनके वंशज अभी जीवित पौधों के रूप में है तो पिछली जलवायु परिभाषित की जा सकती है।

22. सूचक जीवाणु (Bacteria Indicators)–अनेक जीवाणु मृदा की गहरी पर्तों में पाये जाते हैं, जो विशिष्ट धातुओं के अयस्क (Ore) के साथ जुड़े रहते हैं। अतः ये जीवाणु इन धातुओं या खनिज पदार्थों के सूचकों के रूप में कार्य करते हैं।

मानकों (स्टैण्डर्स) की सेटिंग

(Setting of Standards)

जनसंख्या वृद्धि एवं विकास के कारण आज हमारे सभी ओर अर्थात पानी, वायु भूमि में विषाक्तता की वृद्धि हुई है। पेड़ पौधों की अंधाधुंध कटाई हुई है एवं वन्य जीवों की हिंसा हुई जिससे पारिस्थितिकी असंतुलित हो गई है।

पानी, वायु, भूमि में विषाक्त पदार्थ होती है। पानी व वायु में उपस्थित विषाक्त पदार्थों को मानव, वन्य जीव एवं वनस्पतियॉं ग्रहण करती हैं। इन विषाक्त पदार्थों को निश्चित मात्रा से अधिक ग्रहण करने पर ये रोगी हो जाते हैं। इन विषाक्त पदार्थों की यह निश्चित मात्रा ही उनके मानक (Standard) कहलाते हैं।

वाहितमल जल से भूमि को सिंचित करने से पूर्व उसे उपचारित करना होता है अन्यथा भूमि रोगी हो जाती है। आतिशबाजी के विस्फोट बिन्दु से कुछ दूरी बाद शोर सीमा निश्चित की गई है। विभिन्न प्रकार के वाहनों के निर्माण के समय शोर संबंधी मानकों को निर्धारित किया गया है।

जल, वायु में उपस्थित विषाक्त पदार्थों एवं गैसों के, वाहितमल जल में उपस्थित विषाक्त पदार्थों के शोर एवं अन्य मानकों के बारे में हम विस्तार से चर्चा करेंगे –

1. फ्लोराइड मानक –औद्योगिक बहिःस्राव, रासायनिक सुगंध, दवाईयॉं, कीटनाशकों में 1 से 3 प्रतिशत फ्लोराइड होता है।

फ्लोराइड की विभिन्न मात्रा से मनुष्य पर प्रभाव–

< 0.5 mg/1 मनुष्यों के लिए निरापद मात्रा है।

0.5–1.5 mg/1 दॉंत के इनेमेल (Enamel) बनने में बढ़ावा।

>1.5 mg/1 फ्लोरोसिस रोग (Destruction of enamel) in Bones जिसमें हड्डियों में बांकापन, पाचन तंत्र, तंत्रिका तंत्र व कंकाल अव्यवस्थित हो जाते हैं।

2. शोर मानक (Noise standard) - मनुष्य बिना किसी असुविधा के जो शोर सह सकता है उसकी अधिकतम सीमा 80 डेसीबल है। इससे अधिक वाले शोर में लम्बे समय तक रहने से सुनने की शक्ति स्थायी रूप से खत्म हो जाती है। दस वर्षों में सुनने की शक्ति लगभग 15 डेसीबल रह जाती है।

(अ) दिन (प्रातः 6.00 बजे से रात्रि 10.00 बजे तक) व रात्रि (10.00 बजे से प्रातः6.00 बजे तक) के समय में विभिन्न क्षेत्रों में शोर के अर्थ में हवा की गुणवत्ता के मानक निम्न सारिणी प्रदर्शित किये गये हैं –

तालिका – हवा की गुणवत्ता के मानक –

क्षेत्र	ध्वनि का स्तर–डेसीबल में	
	दिन	रात
औद्योगिक	75	70
व्यापारिक	65	55
आवासीय	55	45
संवेदनशील	50	40

(ब) अग्नि पटाखों के लिए शोर मानकों पर नोटिफिकेशन

नोटिफिकेशन का मुख्य उद्देश्य उत्सवों पर पटाखें फूटने से शोर प्रदूषण नियंत्रित करने का है। उच्च तीव्रता के पटाखों के उपयोग से मानव के सुनने के तंत्र पर विपरीत प्रभाव पड़ सकता है। इसलिए पटाखों के निर्माण के स्तर पर शोर को नियंत्रित करने के लिए विशिष्ट मानक विकसित किये गये।

नोटिफिकेशन का अतिमहत्वपूर्ण रूप इस प्रकार है –

अग्नि पटाखों के कारीगरों से आशा की जाती है कि वे चार मीटर दूरी पर 125 डेसीबल से अधिक शोर स्तर के पटाखों का निर्माण न करें।

शीघ्रदाह्य (विस्फोटक) विभाग (Department of explosives) से आशा की जाती है कि वह अग्नि पटाखों के लिए नियत किये गये मानकों को लागू करने में आश्वस्त हों।

(स) अग्नि पटाखों के लिए शोर मानकः–

1. पटाखे फूटने के बिन्दुओं से चार मीटर दूरी पर, अग्नि पटाखों द्वारा उत्पन्न शोर स्तर 125 डेसीबल या 145 डेसीबल से बढ़ने पर उनकी कारीगरी, विक्रय या उपयोग निषेध है।

2. जुड़े हुए अग्नि पटाखों (Jointed fire crackers) के लिए उपयुक्त निर्धारित सीमा कम है। शीघ्रदाह्य विभाग को इन मानकों को लागू करने में आश्वस्त होना चाहिए।

3. विभिन्न गाड़ियों के निर्माण स्तर (Manufacturing stage) - इस प्रकार के मानक तालिक के माध्यम से दिग्दर्शित किये जा सकते हैं –

तालिका–वाहनों के निर्माण स्तर पर शोर मानक–

वाहन	दिनांक	शोर सीमा या मानक–डेसीबल (dB) में			
		80 cm^3 तक विस्थापन के लिए	80cm^3 से ज्यादा व *175* cm^3 के विस्थापन के लिए	शून्य से 175 तक के विस्थापन के लिए	175cm^3 से अधिक के विस्थापन के लिए
दुपहिया	1 जन.03 1 अप्रै.05	75 75	77 77	– –	80 80
तीन पहिया	1 जन.03 1 अप्रै.05	– –	– –	77 77	80 80
पेसेन्जर कार	**1 जन.03**	**–**	**–**	**–**	**75**

4. वाहितमल जल से सिंचाई हेतु उसमें उपस्थित तत्वों के मानक–निरंतर वाहितमल जल से सिंचाई करने पर भूमि की जल शोषण क्षमता घटने से जल भीतरी स्तरों की ओर बढ़ता है तथा अंततः भूमि जल से मिश्रित हो जाता है। इस प्रकार, यह पेय जल की गुणवत्ता को प्रभावित करता है। नाइट्रेट, फ्लोराइड तथा बोरेट की मात्रा बढ़ जाने से जल पीने योग्य नहीं रह जाता है।

शीलाधर मृदा विज्ञान संस्थान, इलाहाबाद में किये गये वाहितमल जल के उपयोग संबंधी प्रारंभिक प्रयोगों से यह स्पष्ट हो चुका है कि ऐसे जल से सिंचाई करने से मृदा प्रदूषण बढ़ सकता है, जिससे पौधे विषैले तत्वों की अधिक मात्रा अवशोषित कर सकता है। शीलाधर फार्म पर उपलब्ध वाहितमल जल में भारी धातुओं की सान्द्रता एवं एफ.ए.ओ. के अनुसार सिंचाई जल में अधिकतम अनुमेय सान्द्रता तालिका में प्रदर्शित की गई है –

तालिका–सिंचाई हेतु वाहित मल जल में भारी धातुओं के मानक

भारी धातुएँ	वाहितमल जल में सान्द्रता (ppm में)	एफ.ए.ओ.के अनुसार वाहितमल जल अधिकतम अनुमेय सान्द्रता (ppm में)
कैडमियम	0.54	0.01
क्रोमियम	0.58	0.1
लैड	3.52	5.0
जिंक	8.32	2.0
आयरन	10.57	5.0

यहॉं पर **ppm**= part per million

5. अस्पताल से जुड़ी नाली में बहने वाले बहिःस्राव के संबंध में सुनिश्चित मानक (सीमाएं) तालिका में दिग्दर्शित किये गये हैं।

तालिका अस्पताल के बहिःस्राव की सुनिश्चित सीमाएं–

पैरामीटर्स	आज्ञा योग्य सीमाएं
pH	6.3 –9.0
निलंबित ठोस	100 mg/l
तेल तथा ठोस	10 mg/l
बॉयलॉजीकल ऑक्सीजन डिमाण्ड (BOD)	30 mg/l
केमिकल ऑक्सीजन डिमाण्ड (COD)	250 mg/l

यहॉं पर mg/l = मिलीग्राम प्रति लीटर।

6. जल के प्रदूषण की क्षमता–जल के प्रदूषण की क्षमता प्रायः इसकी जैव रसायन ऑक्सीजन डिमाण्ड (Biological Oxygen Demand - BOD) पर निर्भर करती है। BOD जल में धुलित ऑक्सीजन की वह मात्रा जो एक निश्चत समय में तथा निश्चित ताप पर पानी में स्थित सूक्ष्मजीवों द्वारा ग्रहण की जाती है।

BOD को मापने के लिए पानी के एक नमूने को जिसमें ज्ञात ऑक्सीजन की मात्रा अंधेरे में 20 अंश सेल्सियस पर पॉच दिवसों के लिए रखते हैं। सैम्पल को अंधेरे में इसलिए रखा जाता है कि किसी भी जीवधारी द्वारा प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया सम्पन्न न की जाये। इस अवधि के उपरांत ऑक्सीजन की मात्रा का पुनः मापन किया जाता है। बी.ओ.डी. की अधिक मात्रा इस तथ्य को इंगित करती है कि उसमें सूक्ष्मजीवी प्रदूषण है।

घर की गन्दी नाली से निकले गन्दे पदार्थों की बी.ओ.डी. 200–400 ppm होती है। अप्रदूषित जल का BOD 5 mg O_2 /लीटर/प्रति 5 दिन होता है। वाहितमल (Sewage) का BOD लगभग 600 mg O_2 /लीटर/प्रति 5 दिन होता है। पीने योग्य स्वच्छ पानी की BOD O1 ppm से कम होनी चाहिए।

वाहितमल के शुद्धिकरण (Sewage treatment) द्वारा, वाहितमल (Sewage) के BOD को 30 mg O2 /लीटर/प्रति 5 दिन किया जा सकता है।

7. विकिरण (Radiation) के मानक –विकिरण की कोई सुरक्षित मात्रा नहीं है। विकिरण की मात्रा में अल्प बढ़ोतरी भी खतरे का संकेत होती है। अधिक समय तक अथवा बार–बार विकिरण से कैंसर अथवा ल्यूकीमिया हो सकता है तथा उत्परिवर्तन (Mutation) के अवसर बढ़ जाते हैं। हानिकारक जीन मनुष्य, पादपों तथा प्राणियों में सदैव बना रह सकता है एवं उनकी संतानों/आने वाली पीढ़ियों को प्रभावित कर सकता है।

8. हवा की गुणवत्ता के राष्ट्रीय मानक –मनुष्यों के लिए सल्फरडाइऑक्साइड (SO_2) की 0.5 ppm मात्रा, सान्द्रता की वह सीमा है, जहॉ तक की इसका कोई प्रभाव दृष्टिगोचर नहीं होता है। वृक्ष SO_2 की 60 PPM तक की मात्रा में भी जीवित रह लेते हैं।

9. पानी की गुणवत्ता के स्वीकृत मानक –पानी की गुणवत्ता से संबंधित मानकों को तालिका में दिया गया है।

तालिका पानी की गुणवत्ता के स्वीकृत मानक (Water quality accepted standards)

mg/l में pH को छोड़कर

लाक्षणिक (Characterstics)	विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) द्वारा 1971		भारत सरकार द्वारा 1975/ नवीनत	
	इच्छा योग्य सीमा	अधिकतम संभव	स्वीकार्य	अधिकतम संभव
pH	7.5–8.5	6.0–9.2	6.5 7 8.5	6.5–8.5
सल्फेट क्लोराइड	200	400	200	400
क्लोराइट	200	600	200	1000
फ्लोराइड	01	01.5	01	01.5
नाइट्रेट	75	200	75	200
मैग्नीशियम	30	150	30	150
आयरन	0.1	01	0.1	01
मैग्नीज	0.05	0.5	0.05	0.05
तांबा	0.05	0.1	0.05	1.5
जिंक	5	15	5	15
फिनोल	0.001	0.002	0.001	0.002
पारा	–	0.001	0.001	0.001
डिटरजेंट	–	–	–	01
कैडमियम	0.01	0.01	0.01	0.01
क्रोमियम	0.01	0.05	0.05	0.05
सेलेनियम	–	0.01	0.01	0.01
लेड	–	0.1	0.01	0.1

नोट–pH का कोई मात्रक नहीं होता है।

ppm = parts per million